द्वितीय अध्याय

दूवितीय अध्याय

‘‘बिस्राम्रपुर का संत उपन्यास में पात्र और चरित्र चित्रण का अनुशीलन ।’’

प्रस्तावना :

सन्, 1960 के बाद पात्रों के चरित्र चित्रण की उन्नत स्थिति टूटती गयी । उपन्यास में चरित्र – चित्रण तत्व को अनेक दिशाओं से आघात होने लगे । पात्रों का चरित्र – चित्रण परिवेश से जुडकर होने लगा । सामंतवादी कृषि व्यवस्था में आजादी के पहले व्यक्तित्व का निर्माण एक कठिण बात थी । अंतिम दशक के पात्र टायीप्ड या बंधे – बंधाए साचे में देखने को नहीं मिलते । समाजव्यवस्था को जटिलता के कारण पात्रों के चरित्र में अनेक चुन्नौतियाँ उभर उठी । विकास के साथ–साथ पात्रों के चरित्र में विकृति के दर्शन होने लगे । अस्तित्ववादी विचारधाराओं ने पात्रों को प्रभावित किया । स्त्री-पुरुषों में अन्याय – अत्याचार के प्रति चेतना निर्माण हुयी । लेखकों के मन में मनुष्यों का नियती के प्रति कम आकर्षण रहा । अस्तित्वाद ने चरित्र संबंधी धारणाओं को जबरदस्त धक्का दिया । पात्रों की सर्जनशीलता के दर्शन होने लगें । पात्रों की विचारधाराओं में संघर्ष का निर्माण होने लगा । पात्र अनुभूति और संवेदना के धरातल पर अपने – अपने विचार प्रस्तुत करने लगे । स्पष्ट है कि बीसवीं सदी के अंतिम सदी का पात्र उपन्यासकार की हाथ की निर्मिती नहीं रहा । आँचल का प्रतिनिधित्व करनेवाला पात्र उभर उठा । पात्रों की अपेक्षा अंचल को अधिक महत्व प्राप्त होने लगा । समाज की एक– इकाई के रूप में पात्र अपने – अपने वर्ग पर अपनी अपनी जातियोंका, धर्मोंका, बिरादरियोंका प्रतिनिधित्व करने लगा । विविध विचारधाराओं के बीच इस दशक का पात्र डुबता हुआ दिखाई देने लगा । परिवर्तीत राजनीति, समाज, समाजस्थिति, धार्मिक परिस्थिति का प्रभाव, पात्रों की रहन – सहन और चाल-चलन पर पड़ने लगा ।

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

युग बोध की गवाही, समय बोध का सबुत पात्र देने लगे ।

संक्षिप्त में हम कह सकते हैं कि इस कालखंड के उपन्यासों के पात्र राजनीतिक प्रभाव में अटके हुए देखने को मिलते हैं । इस पृष्ठभूमि के आधार पर हम पात्रों के चरित्र–चित्रण का अनुशीलन करेंगे –

2.1 चरित्र – चित्रण का महत्व -

प्रेमचंद जी ने उपन्यास की व्याख्या करते हुए लिखा है कि मैं उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र मात्र समझता हूँ । मानव चरित्र के भिन्नत्व में अभिन्नत्व दिखाना उपन्यासकार का कर्तव्य है । इस दृष्टि से यदि उपन्यास का विषय मनुष्य है, तो चरित्र चित्रण भी उपन्यास का महत्त्वपूर्ण तत्व है । मनुष्य का अस्तित्व तो उसके अपने चरित्र में होता है । बिना चरित्र मनुष्य के भाष्य का विधान स्पष्ट नहीं किया जा सकता । चरित्र-चित्रण के माध्यम से ही उपन्यासकार अपना जीवन दर्शन प्रस्तुत करता है और पात्रों में प्राण ड़ालकर उन्हें जीवन के घात-प्रतिघात आदि सहने के हेतु संसार में छोड़ देता है । उनके विचारों तथा प्रवृत्तियों आदि का मौलिक विश्लेषण चरित्र–चित्रण के माध्यम से ही किया जा सकता है । चरित्र–चित्रण के बारें में प्रताप नारायण टंडन जी का मत उल्लेखनीय है, ‘‘वास्तव में उपन्यास का मूल विषय मनुष्य और उसका जीवन होता है । पात्र अथवा चरित्र-चित्रण के माध्यम से उपन्यासकार इस जीवन के विविध रूपों को उपस्थित करता है ।’’[1]

उपन्यासकार के लिए किसी भी चरित्र को निर्माण करना तब संभव है जब वह अपनी कल्पना के सम्मुख किसी जीवित व्यक्ति को लाकर खड़ा करता है । अत: उपन्यासकार जिन चरित्रों का निर्माण करता है, उसके पीछे एक निश्चित आधार अथवा गुणों का प्राधान्य रहता है । हम प्रस्तुत उपन्यास में चित्रित प्रमुख पात्रों एवं गौण पात्रों का अनुशीलन करेंगे –

प्रमुख पात्र ।

2.2 कुँवर जयंतीप्रसाद सिंह -

'बिस्रामपुर का संत' एक सफल सामाजिक उपन्यास है । इस उपन्यास में कुँवर जयंतीप्रसाद सिंह का चरित्र-चित्रण बहती नदी की तरह कभी तेज दौड़ता हुआ, कभी मंद चलता हुआ तो कभी टेढ़ा बहता हुआ चित्रित हुआ है । कुँवर साहब प्रमुख पात्र के रूप में चित्रित हैं । अत: उनके चरित्र की निम्नलिखित विशेषताएँ चित्रित की गयी हैं ।

2.2.1 महत्वाकांक्षा -

मनुष्य के अपने जीवन में महत्वकांक्षी होना जरूरी है लेकिन मनुष्य की महत्वकांक्षा ऐसी भी नहीं होनी चाहिए कि वह कभी पूरी ही न हो ।

कुँवर जयंतीप्रसाद सिंह एक महत्वकांक्षी व्यक्ति हैं लेकिन उनकी महत्वकांक्षा हमेशा बढ़ती ही रहती है और उसी कारण वे कभी चैन की नींद भी नहीं सोते । कुँवर साहब हमेशा एक के बाद एक महत्वकांक्षा रखते आए हैं । अत: उनके जीवन में ऐसा क्षण भी नहीं आया जिसमें उन्होंने अपने को भूतपूर्व तअल्लुकेदार और उससे जुड़ी अंतर्कल्पनाओं को अलग किया हो । कुँवर साहब हमेशा आगे ही बढ़ने की सोचते है और उस के लिए प्रयत्न भी करते रहते हैं ।

कुँवर साहब पहले तअल्लुकेदार थे । कुँवर साहब को संयुक्त राष्ट्रसंघ में जाने का मौका मिलता है और साथ ही एक प्रतिनिधि मंडल में भी उन्हें शामिल होने का मौका प्राप्त होता है ।

"जो भी हो, वे संयुक्त राष्ट्रसंघ में, देश के प्रतिनिधि मंडल में आल्टरनेट डेलिगेट बन गए और इस तरह उनके जीवन वृत्त में एक महत्वपूर्ण पंक्ति का इजाफा हुआ ।"[2]

इंग्लंड जाकर बैरिस्टरी की पढ़ाई करना और वही से ही आय. सी. एस. की परीक्षा देना यह भी कुँवर साहब की एक महत्वपूर्ण ऐसी महत्वकांक्षा है । उनकी काबिलियत होकर भी वे आय. सी. एस. नहीं हो पाए । कारण केवल यही था कि उनके बडे भाई स्वतंत्रता आंदोलन में शामिल थे । कुँवर साहब आय. सी. एस. तो नहीं लेकिन वकिल तो जरूर बन गए । कुँवर साहब मात्र इस पर संतुष्ट नहीं है । अत: वे इतने महत्वाकांक्षी रहे है कि महामहिम और योर एक्सिलेंसी का संबोधन भी सुनना उन्हें अब अच्छा नहीं लग रहा है । उनकी राय के अनुसार, "उन्हें इत्मीनान था कि उनके जैसे दुर्लभ योग्यतावाले आदमी के लिए एक-न-एक उँची कुर्सी हर वक्त खाली रहेगी । देश की बगटुट राजनीति में प्रधानमंत्री के इर्द–गिर्द डोलने फिरनेवाले दोन ढाई दर्जन लोगों में इनकी गिनती नहीं थी पर भीतर ही भीतर वे अपने को प्रधानमंत्री का विघ्नविनाशक मानने के आदि हो गए थे ।"[3]

आगे चलकर बिस्रामपुर जाकर अपना नाम उँचा करना चाहते हैं । अत: जिनेवा और वाशिंग्टन की यात्रा यह भी उनकी एक महत्वकांक्षा ही है ।

अपने जीवन के अस्सी साल व्यतित होने के बावजूद भी उन्हें कभी ऐसा नहीं लगा कि वे अब इतने सक्षम नहीं कि उनका शरीर उनकी भारी महत्वाकांक्षाओं के उपयुक्त हो । कुँवर साहब तअल्लुकेदार से गवर्नर तक पहुँचने के बीच के समय तथा गवर्नर होने के बाद के समय को हमेशा इस दृष्टिकोण से सोचते हैं कि उनकी उपलब्धियाँ अति महत्वपूर्ण रही ।

निष्कर्षत: कुँवर साहब अपने जीवन में इतने महत्वकांक्षी रहें हैं कि हमेशा भविष्य में आगे बढ़ना – यही सोचते हैं । जो है उससे भी बडा बनना चाहते हैं । कुँवर साहब सिर्फ बड़े बनने की बात सोचते नहीं तो उसके लिए प्रयत्न भी करते हैं जो है उसमें संतुष्ट रहना उनके बस की बात नहीं है और परिणाम यह होता है कि उनके जीवन में उन्हें कभी आराम की जिंदगी महसूस ही नहीं होती ।

2.2.2 अतृप्त व्यक्तिमत्व -

व्यक्ति अगर अपने पास जो कुछ है उसपर संतुष्ट रहने लगा तो उसका जीवन सुख – शांति से गुजर जाएगा । जरूरत से ज्यादा संपत्ति इकट्ठा करने की चाह में मनुष्य अपने आप को भी भूल जाता है ।

मनुष्य अगर वासना से प्रेरित हो और उसकी वह इच्छा अतृप्त रही तो मनुष्य मानो पागल जैसा ही व्यवहार करता है । वह वासना उसे अंत तक चैन से बैठने नहीं देती ।

प्रस्तुत उपन्यास के पात्र कुँवर साहब ग्रहस्थी आदमी हैं । पत्नी और बेटे विवेक के साथ रहकर वे खुश नहीं हैं । कुँवर साहब जयश्री के साथ प्रेम करते थे अत: उसी जयश्री की यादों ने उन्हें जीवन के अंतिम दिनों तक छोडा नहीं । सुंदरी के ओर भी कुँवर साहब उसी तरह आकर्षित होते हैं जिस तरह जयश्री की ओर हुए थे । कुँवर साहब एक बेटे के बाप होकर भी फिर से सुंदरी के साथ विवाह करना चाहते हैं । सुंदरी को कहते हैं कि "मैं तुमसे विवाह करना चाहता हूँ ।"[4]

असल में कोई भी व्यक्ति अपने जीवन में पूर्णत: संतूष्ट नहीं होता । कोई ना कोई कमी उसके जीवन में होती ही है । इसी असंतुष्टता की तुष्टी करने के लिए हम आजीवन उसके पिछे भागते रहतें हैं । फिर भी हम तृप्त नहीं होते । अत: इसी तथ्य को लेखक शुक्लजी ने कुँवर जयंतीप्रसाद सिंह के जरिए चित्रित किया है ।

2.2.3 अपराध भावना से ग्रस्त -

कई बार ऐसा होता हैं कि जब–तक मनुष्य स्वयं को पहचानता नहीं तब वह औरों से भी वैसा ही बर्ताव करता है, जैसा उसका मन चाहता है । जीवन कैसा भी क्यों न हो लेकिन जीवन के अंतिम दिनों में मनुष्य अपने किए हुए कर्तृतों पर थोडा बहुत क्यों न हो जरूर

सोचता है । तब वह इतना सोचता है कि आत्मग्लानि से आहत हो जाता है और स्वयं को पश्चाताप की आग में ढकेल देता है ।

कुँवर साहब ने सुशीला के नाम आया सुंदरी का पत्र पढा और आत्मग्लानि ने उन्हें इतना आहत कर दिया कि उनके हाथ – पैर सुन्न हो गए । उनके अविवेक और उतावलेपन ने अनजाने ही सुंदरी और विवेक की जिंदगी को एक सटके से तोड दिया था । इस एहसास ने उन्हें इतना शिथिल कर दिया कि वे दोपहर का भोज भी भूल गए । एकबार सुंदरी सोयी थी तब वह दृष्य देखकर कुँवर साहब के मन में हलचल सी हो गयी । अत: कुँवर साहब सोती हुयी सुंदरी को खड़े–खड़े देर तक देखते रहे और देखते -देखते कब उसपर झुक आए इसका पता उन्हें भी नहीं रहा । लौटते वक्त उन्होंने सोचा सुंदरी को इसतरह छूने से कई परिणाम हो सकते हैं । अपने खिलाफ उनका मन कटुता और हीनता के अतिरेक में उबल रहा था ।

एक बार कुँवर साहब ने सुंदरी को अपने बाहों में समेट लिया और शादी करने का आग्रह किया लेकिन तुरंत ही उन्हें अपनी गलती का एहसास हुआ और वे पछताने लगे । कुँवर साहब सुंदरी से माफी माँगना चाहते थे लेकिन सामने जाकर बोल न सके । कुँवर साहब को अपने अपराध का बोध हुआ, ‘‘मैं तुम्हारा गुनहगार हूँ सुंदरी, मुझे क्षमा कर दो और फिरसे सबकुछ पहले जैसा हो जाने दो ।"[5] अत: मनुष्य को जब अपनी गलतीयों का एहसास हो जाता है तो मनुष्य कहीं का भी नहीं रहता ।

स्पष्ट है कि कुँवर साहब को जीवन के अंतिम दिनों में अपराधों का बोध होता है, उन्हें अपनी गलतियों का इतना एहसास होता है कि उन्हें मानों भूमि भी आधार नहीं देती । अत: विवश होकर वे आत्महत्य कर बैठते हैं ।

कुँवर साहब ठंडे दिमाग से अपनी हत्या के बारें में सोचते , – ''एक मंजे हुए हत्यारे की तरह वे ठंडे दिमाग से अपनी हत्या के तरीके के बारे में सोचते रहे थे और कई विकल्पों को खारिज करके उन्होंने अंत में बेतवा की धारा को इस काम के लिए चुना था ।''[6]

इस तरह कुँवर साहब अपराध भावना से ग्रस्त होते हैं ।

2.2.4 दूसरों के प्रति सोचने का ढंग -

समाज में कुछ अपवादों को छोडकर, संख्या में कितने लोग हैं जो औरों का भला चालते है ? दूसरों के प्रति सोचने का, विचार करने का तथा देखने का दृष्टिकोण अच्छा है ऐसे लोग संख्या में बहुत कमी हैं । आमतौर पर आज समाज में खींचातानी, एक-दूसरें के प्रति जलन के सिवा कुछ नहीं दिखाई देगा । कई बार ऐसा भी होता है कि जिनके नाम का हम अच्छे या महात्मा कहकर ढिंढ़ोरा पिटते हैं, उनका भी सही रूप समाज के सामने आता है ।

प्रस्तुत उपन्यास के केंद्रिय पात्र कुँवर जयंतीप्रसाद सिंह ने खुद के सिवा किसी को कभी भी महत्व नहीं दिया ।

नेता लोग मंचपर बड़े जोर और दिमाख से जातीयता के बारें में भाषण करते हैं । जातीयता को हटना चाहिए इस बात पर काफी जोर देते हैं लेकिन मंच से नीचे उतर आने के बाद वे स्वयं जातीयता की शुरूआत करते हैं ।

जैसे कुँवर साहब राज्य के राज्यपाल है लेकिन कोई हरिजन आकर उनके दीवानखाने के सोफे पर बैठ जाए या तो पर्दों के कपड़ों को छू ले तो कुँवर साहब तुरंत ही पर्दों के कपड़े बदल्वा देते हैं । अत: हरिजनों के प्रति उनका दृष्टिकोण कितना गंधा है यह स्पष्ट होता है ।

कुँवर साहब सुंदरी की संस्थाओं को आगे बढ़ाना चाहते हैं । अत: जीवन के अंतिम दिन किसी अच्छे काम के लिए लगाना चाहते हैं और इसीलिए वे बिस्रामपूर के आश्रम में

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

चले आते हैं । आश्रम में सुंदरी ने ही चलायी एक संस्था याने बालविहार है, उसी बालविहार का एक छबलाल नामक लड़का बरामदे में रो रहा था, वह कुँवर साहब सह नहीं पाए । अत: उस बच्चे को हटाने के लिए कहते हैं ।

स्पष्ट होता है कि कुँवर साहब का औरों के प्रति देखने का दृष्टिकोण अच्छा नहीं है । अत: स्वयं के सिवा किसी को महत्व भी नहीं देते ।

2.2.5 भोगवादी वृत्ति -

परिवार में पति-पत्नी संबंध महत्वपूर्ण होते हैं । ये संबंध परिवार को आदर्श एवं विकसित पथ पर लाने के लिए आवश्यक होते हैं । भौतिक युग में इस संबंध में तनावसा आ गया है । कभी पत्नी पर-पुरूष के प्रति आकर्षित होती है । तो कभी पति पर-स्त्री के प्रति आकर्षित होता है । इसी तथ्य को लेखक ने कुँवर साहब के जरिय बताया है ।

कुँवर साहब बी. ए. में थे तभी उनके जयश्री के साथ प्रेम संबंध थे । अत: कुँवर साहब का यह प्रेम असली प्रेम नहीं था तो केवल वासना थी । उस प्रेम में केवल आकर्षण मात्र था । जयश्री एक शादी शुदा औरत थी । कुँवर साहब की परीक्षा नजदीक आयी थी लेकिन कुँवर साहब को मात्र परीक्षा का खयाल बिल्कुल नहीं था । उनके सामने थी केवल जयश्री, उसका प्यार । अत: इसी आवेग में आकर कुँवर साहब सोचते हैं कि, ''बी. ए. पास करने के मुकाबले जयश्री के साथ खली हवा, आकाश, वनस्पति या समुद्र की बातें करते हुए कुछ क्षण बीता लेना जिंदगी की कितनी बड़ी उपलब्धि होगी ।''[7]

व्यक्ति की रहन–सहन और आचार विचार व्यक्ति को समाज में एक स्थान दिलाता है । भोग के प्रति कुँवर साहब इतने आकर्षित है कि वे एक जगह भगवान से प्रार्थना करते हैं, ''हे ईश्वर ! या अल्लाह ! ओ गॉड ! मुझे कुछ भी न दो, सिर्फ चौबीस घंटे का एक ऐसा दिन दो जो बिल्कुल अकेले जयश्री के साथ बिता सकू । सिर्फ एक दिन ।''[8]

इस प्रेम को प्रेम कहना उचित होगा ? आकर्षण और वासना को प्रेम कहना याने प्रेम पर कलंक लगाना होगा । अत: प्रेम तो मानव जीवन को एक सूत्र में बांधनेवाला तत्व है । मानव जीवन के कल्याण के लिए प्रेम भावना का सदा ही महत्वपूर्ण योगदान रहा है । प्रेम तो कुदरत की मनुष्य को दी हुयी एक देन है । अत: प्रेम में मनुष्य अंधा भी हो जाता है, यहाँ तक की अपने उद्देश्य को भी भूल सकता है लेकिन एक मात्र सत्य है कि कामवासना के बलबुते पर खड़ा होनेवाला प्रेम नष्ट ही हो जाता है, कभी सफल नहीं होता ।

कुँवर साहब का प्रेम भी कामवासना के बलबुते पर ही खड़ा है । अगर कुँवर साहब जयश्री से दिल से प्यार करते तो वे पुन: शादी क्यूँ करते हैं ? इससे स्पष्ट होता है कि वे भोगवादी वृत्ति के है । आगे चलकर कुँवर साहब सुंदरी के साथ भी इसी तरह आकर्षित होते हैं जैसे जयश्री के प्रति आकर्षित थे । अत: कुँवर साहब सुंदरी के साथ शादी भी करना चाहते हैं । खुद एक विधुर होकर एक बेटे के पिता होकर भी फिर से शादी करना चाहते हैं ।

निष्कर्षत: वर्तमान युग में मनुष्य का जीवन अनिश्चित, पराधीन एवं संकटग्रस्त बन गया है । उसके आदर्शों, आस्थाओं तथा जीवन मूल्यों को विच्छेदित किया जा रहा है । परिणाम स्वरूप मनुष्य का जीवन भावनाहीन, मूल्यहीन और दिशाहीन बन गया है । जिसकी अभिव्यक्ति कुँवर साहब के माध्यम से शुक्ल जी ने प्रस्तुत की है ।

2.2.6 कुँठा से ग्रस्त -

कुँठा व्यक्ति परिवर्तन को प्रभावित करती है । व्यक्ति के जीवन में अनेक अभिप्रेरणाएँ होती हैं । और प्रत्येक का कोई न कोई लक्ष्य होता है । लक्ष्य प्राप्ति के लिए व्यक्ति अपनी क्षमतानुसार प्रयत्न करता है । यदि उन प्रयत्नों में विफल होता है, तो अन्य कोई मार्ग ढूँढ लेता है । लक्ष्य प्राप्ति के बाद अभिप्रेरणा तृप्त हो जाती है और अभिप्रेरणात्मक वर्तन

समाप्त हो जाता है परंतु तृप्ति नहीं होती । तब भग्नाशा में उसमें कुँठा उत्पन्न होती है और वह कुँठाग्रस्त होता है ।

प्रस्तुत उपन्यास में कुँवर साहब की मानसिकता कुंठाग्रस्त है । कुँवर साहब आय. सी. एस. बनना चाहते थे लेकिन नहीं बन पाते और इसी कारण उनकी मानसिकता कुंठाग्रस्त बनती है । कुँवर साहब कुंठा ग्रस्त बनने के लिए और एक कारण महत्वपूर्ण है कि वे हमेशा काम वासना से प्रेरित है और उनकी यह अभिलाषा तृप्त नहीं हुयी है । इस कुंठा का गहरा परिणाम उनके मन और मस्तिष्क पर हुआ है । अत: उनके बर्ताव में परिवर्तन आता है ।

2.2.7 पलायनवादी -

जीवन में उत्पन्न दु:ख, चिंता, तनाव, विफलता आदि को भूलाने के लिए व्यक्ति पलायन करता है । वह इन सारी बातों से तंग आ जाता है और इसमें से उसका नन भागना चाहना चाहता है । जीवन में ऐसी स्थिति उत्पन्न होने के बाद व्यक्ति में आत्मविश्वास का ऱ्हास होने लगता है और आत्मविश्वासहीन मानसिकता में पलायन करता है । पलायन के मूल में जीवन में उत्पन्न दु:ख, चिंता, तनाव, अभाव आदि हैं । अत: श्रीलाल शुक्ल जी के पात्र-कुँवर जयंतीप्रसाद सिंह भी पलायनवादी वृत्ति के ही हैं ।

कुँवर साहब सुंदरी का पत्र पढ़कर बेचैन होते हैं, वे कहते हैं, ''मेरा अस्तित्व यहाँ खत्म हो चुका है ..''[9] अत: परिस्थिति का सामना बिना करके ही वे मौत को अपनाकर जीवन से पलायन करते है, अत: वे स्वयं ही मान लेते हैं कि मेरे कारण सुंदरी और विवेक की जिंदगी बरबाद हो गयी । अत: इस उत्पन्न तनाव को भूलने के लिए कुँवर साहब आत्महत्या करते हैं ।

2.2.8 भूदान में सामंतवादी दृष्टिकोण -

भूमि सुधार व्यवस्था के बारे में चलाया गया आंदोलन कुँवर साहब की नजर में मृगमरीचिका नहीं है । इस कार्य के बारे में सकारात्मक दृष्टिकोण रखकर वे बिस्रामपुर जाना चाहते हैं लेकिन विवेक को यह बात नाटकीय लगती है ।

कुँवर साहब खुद विवेक से कहते हैं, "भूदान आंदोलन में मेरी पहले से आस्था रही है । तुम इसे नहीं मानते ? वहाँ रहकर मैं अगर उस काम को आगे बढाऊँ जिसे सुंदरी ने अपने त्याग और तपस्या से सींचा था तो वह भी तुम्हारी नजर में सनक भर है ?"[10]

अत: कुँवर साहब के अनुसार भूदान आंदोलन का उनके जीवन पर अच्छा असर हुआ है ।

'बिस्रामपूर का संत' उपन्यास का प्रमुख पात्र है कुँवर जयंतीप्रसाद सिंह । आत्मकेंद्रित व्यक्तित्व का धनी कुँवरसाहब पलायनवादी वृत्ति के व्यक्ति हैं । बिस्रामपुर में रामलोटन जैसे किसानों की हालत देखते हैं, लेकिन उस व्यवस्था को बदलने में असमर्थ रहते हैं ।

कुँवर साहब बुद्धिजीवी जरूर हैं लेकिन आत्मविश्वास की कमी होने के कारण पलायनवादी वृत्ति अपनाते हैं । उपन्यास के अंत में कुँवर साहब काफी दुर्बल लगते हैं ।

अत: कुँवर साहब के चरित्र में पवित्रता नहीं उपयोगितावादी दर्शन की प्रधानता है । नि:संदेह रूप से आज के नेता वर्ग के वे प्रभावशाली प्रतीक हैं । अत: उनका व्यक्तित्व विविध गुणों से संपन्न है । कुँवर साहब इस उपन्यास के केंद्रिय पात्र हैं । कुँवर साहब के चरित्र चित्रण में शुक्ल जी ने बाह्य चित्रण की अपेक्षा अंतरंग चित्रण की ओर अधिक ध्यान दिया है ।

आधुनिक ढोंगी नेताओं का पर्दाफाश लेखकने कुँवर साहब के रूप से किया है । भ्रष्टाचार और अनैतिकता का यह मानवी रूप पद – पद पर प्रेम, अहिंसा जैसे शब्दों का प्रयोग करता है ।

अत: 'बिस्रामपुर का संत' में कुँवर जयंतीप्रसाद सिंह के व्यक्तित्व का सफल निर्वाह हुआ है । उपन्यासकारने उनके गुण दोषों के साथ उनके कार्यकलापों का सफल चित्रग प्रस्तुत किया है ।

2.3 सुंदरी -

नारी परिवार का केंद्र होती है । नारी के बिना परिवार की कल्पना भी नहीं की जा सकती । एक जमाना था जहाँ नारी को रसोई घर में रखा जाता था । लेकिन आज संसार के हर क्षेत्र में परिवर्तन हो गया है । वैसा ही परिवर्तन नारी के कार्यक्षेत्रों में भी हो गया है । आज हम देखते हैं, समाज में ऐसा एक भी स्थान न होगा, जहाँ उसने अपने कदम नहीं रखे । नारी की स्थिति आज जरूर सुधर गयी है लेकिन आज भी समाज में पुरूषों की तुलना में उसे कम ही माना जाता है ।

स्वतंत्रता से पूर्व नारी की तुलना में स्वातंत्र्यत्तोर नारी के व्यक्तित्व में, अधिकारों में परिवर्तन दिखायी देता है । नारी ने हमेशा समयानुसार अपने आपको बदला है । वह पहले पुरष पर हर बात के लिए निर्भर रहती थी लेकिन समय के साथ उस स्थिति में परिवर्तन हो गया है । अब वह उतनी संवेदनशील नहीं रही जितनी प्राचीन काल में थी । यही चरित्रवत विशेषताएँ लेखक ने सुंदरी के माध्यम से उभारी है ।

अत: प्रस्तुत उपन्यास में प्रमुख नारी पात्र के रूप में लेखक ने सुंदरी को चित्रित किया है । अत: उपन्यास की प्रधान स्त्री पात्र सुंदरी है । सुंदरी सु:ख चैन की जिंदगी जीना नहीं

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

चाहती है और इसलिए ही अपना परिवार छोड़कर बिस्त्रामपूर में समाज सेवा करना पसंद करती है ।

2.3.1 भूदान यज्ञ के प्रति वचन बद्ध -

सुंदरी भूदान यज्ञ के प्रति वचन बद्ध रहती है । भूदान – आंदोलन के प्रवर्तक आचार्यजी के प्रति वह हमेशा सम्मान जताती है। भूदान यज्ञ के विरोध में कोई कुछ कहे वह सह नहीं पाती इसलिए ही, भूदान यज्ञ के बारें में जो बहस चल रही थी वह समाप्त करने के लिए कहती है ।

सुंदरी भूदान यज्ञ के प्रति तत्पर रहना चाहती है , यहाँ तक कि वह अपना परिवार भी छोड़कर आयी है । अत: सुंदरी शादी करने की बातपर सोचती नहीं है । सुंदरी अपना घर – बार छोड़कर बिस्त्रामपुर में आकर रहने लगी है । बिस्रामपुर में उसने अनेक संस्थाएँ खोली है । भूदान आंदोलन के प्रति सतर्क रहकर वह अपना काम कर रही है । अत: अपने मन की बाते सुंदरी विवेक से कहती है, ''संबंध इस तरह टूटते हैं विवेकजी, मुझे देखिए । अहमदाबाद जाने से मुझे कोई नहीं रोख रहा है पर एक मिशन से जुड़कर जब वहां से चली आयी तो सबकुछ टूट गया । कितना समय बीत गया है । न उधर से कोई चिठ्ठी आयी न मैने ही लिखी ।''[11] इससे स्पष्ट होता है कि सुंदरी ने अपने को ही अपने काम को समर्पित किया है ।

2.3.2 संवेदनशील और संयमी नारी -

प्रस्तुत उपन्यास में सुंदरी एक संवेदनशील और संयमी नारी के रूप में प्रकट होती है । कुँवर साहब सुंदरी पर बुरी नजर डालकर उसे बाहों में समेट लेते हैं, यहाँ तक की उसपर जबरदस्ती भी करना चाहते हैं । सुंदरी मात्र इतनी संयमी निकलती है कि उस प्रसंग से सहजता से निकलती है । वह उस समय बहुत क्रोधित हुयी थी लेकिन उसने अपना क्रोध प्रकट नहीं किया ।

वह कहती है, "उस समय मेरा संतुलन टूट गया था । मैं कुछ भी कर सकती थी । चिल्ला सकती थी, उनपर स्टूल उठाकर फेंक सकती थी । पर ऊपर से मैं शांत रही ।"[12] इससे ही स्पष्ट होता है कि सुंदरी का अपने मन पर कितना संयम है ।

2.3.3 त्यागी नारी -

भारतीय संस्कृति में त्याग एवं समर्पण नारी का दूसरा नाम है । वह जिस तरह करूणा की मूर्ति है, उसी तरह त्याग की भी मूर्ति मानी जाती है । त्याग करना नारी जीवन का मानो प्रतीक ही है । भारतीय इतिहास की परंपरा में नारी के त्याग के कई उदाहरण हैं ।

प्रस्तुत उपन्यास में सुंदरी एक त्यागी नारी है । अत: प्राचीन संस्कृति में किसी नारी ने अपने धर्म के लिए, अपने पति के लिए त्याग किया था लेकिन सुंदरी एक ऐसी त्यागी नारी है जिसने लोगों की सेवा करने के लिए खुद अपने परिवार का त्याग किया है । अत: सुंदरी अपना सबकुछ छोड़कर बिस्रामपुर में आकर रहने लगी है । समाजकार्य के लिए स्वयं को अर्पित करना चाहती है । दिन – प्रति – दिन सुंदरी का स्थान मजबूत होता चला जाता है । अत: वह विवेक के साथ शादी की बात हमेशा टालती रहती है ।

2.3.4 गूढ चरित्र -

सुंदरी एक ईमानदार और संवेदनशील प्रेमिका है । वह विवेक से मनोमन प्यार करती है । उसका यह प्यार वासनामय या शारिरीक संबंधों का न होकर आत्मिकमिलन का दिव्य तथा उदात्त प्रेम है । सुंदरी विवेक से शादी करके उसके जीवन को विषैला नहीं बनाना चाहती क्योंकि सुंदरी जानती है विवेक कुँवर साहब का बेटा है । वह सुशीला के पत्र के जरिए कहती है, "विवेक की तू फिक्र न कर । मेरे बार बार 'नहीं' कहने से उसे हैरानी भले ही हो, पर वह मेरी भावनाओं को पहचानता है । वह जानता है कि मैं एक साथ दो नावों पर नहीं चढ़ सकती और पहली नाव का मोह मुझे उससे उतरने नहीं दे रहा है ।"[13]

अत: सुंदरी यह नहीं चाहती कि विवेक की जीवन – साथिनी बनकर उसे कहीं भविष्य में दु:ख न उठाना पड़े । सुंदरी का यह कथन उसके चरित्र पर और भी गहरा प्रकाश डालनेवाला है । सुंदरी का चरित्र यहाँ गूढ लगता है ।

2.3.5 असफल प्रेमिका -

नारी ने स्वयं सामाजिक रूढ़ियों से मुक्ति पाने के लिए संघर्ष किया है और समाज में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है । प्राचीन काल में नारी को पुरूष के नियंत्रण में रहना पड़ता था । अत: आधुनिक नारी आज स्वयं अपने जीवन साथी का चुनाव करती है । अत: आज की युवतियाँ प्रेम के क्षेत्र में धन – संपत्ति, जाति आदि भेदों को स्वीकार नहीं करती । प्रस्तुत उपन्यास में सुंदरी भी विवेक को चाहने लगती है । विवेक द्वारा शादी के लिए पुछने पर उसके साथ शादी करने का निर्णय स्वयं ले लेती है । शायद सुंदरी का यह निर्णय भगवान को ही मंजूर न हो इसलिए कुँवर साहब जैसा जानवर उसपर हमला करके अपनी पशुता की पहचान करता है । अत: सुंदरी का प्रेम असफल होता है। वह सुशीला को लिखती है, "मेरा मन, मेरा रोम – रोम 'हाँ' कहने के लिए उतावला था पर मेरी अंतरात्मा मुझे रोक रही थी । समाज के प्रति मेरे आदर्श, मेरे संकल्प मुझे चुनौती दे रहे थे । फिर भी लगता था कि विवेक के प्रस्ताव के सामने वे अपने हथियार फेंकनवाले हैं । तभी कुँवर साहब का आक्रनण हुआ और उस आक्रमण ने मुझको बचा लिया ।"[14]

अत: सुंदरी एक असफल प्रेमिका के रूप में चित्रित हुयी है ।

2.3.6 शिष्टाचार से परिपूर्ण नारी -

प्रस्तुत उपन्यास में सुंदरी हमेशा सामनेवाले व्यक्ति के साथ शिष्टाचार से नेश आती है ।

अतः विवेक जब सुंदरी को ब्याह के बारे में पूछता है तब सुंदरी बिल्कुल शिष्टाचार से बात करती है । "विवेक तुम जानते हो, मैं वहाँ अपना परिवार छोड़कर यहाँ नया परिवार बसाने नहीं आयी हूँ । मेरे सामने एक मिशन है । कोर्टशिप, विवाह यह सब मेरे एजेंडा में नहीं है ।"[15]

अतः सुंदरी कुँवर साहब के साथ भी शिष्टाचार से ही पेश आती है । सुंदरी कुँवर साहब से कहती है, "मैं बिस्रामपूर जा रही हूँ । आपका आशीर्वाद लेने आयी हूँ ।"[16] अतः सुंदरी हमेशा शिष्टाचार से बर्ताव करनेवाली एक संयमी नारी है ।

2.3.7 कोमल व्यक्तित्व -

नारी प्रेम की गरिमा का एहसास करनेवाली केवल सुंदरी ही है । सुंदरी का चरित्र इस उपन्यास की उपलब्धि मानी जा सकती है । सुंदरी नारी के परम रूप को दर्शाती है । जिसमें निश्चल स्नेह है । शुक्लजी ने सुंदरी को बहुत गहरे रंगों में चित्रित किया है । सुंदरी विवेक के लिए सुशीला से कहती है, "माना कि विवेक मेरे लिए सोलह साल से इंतजार कर रहा है और हम दोनों प्रौढता के कगार पर पहुँच गए हैं । पर वह समझदार है, रोमियों, महीवाल, मजनूँ की जाति का नहीं है । उसे यह भी अच्छी तरह मालूम है कि मैं समाज कार्य के महासागर में शादी रचाने के लिए नहीं कुदी थी और अब वह स्वयं देख रहा है कि प्रत्येक बीतते हुए दिन के साथ मैं किनारे से लगातार दूर होती जा रही हूँ, जीवन की जो पद्धति मैंने अपने लिए चुनी है उसके साथ मेरा रिश्ता दिन–प्रति–दिन मजबूत होता जाता है ।"[17]

अतः सुंदरी आकर्षण की फिसलन पर खड़ी होकर भी वह खुद नहीं फिसलती और विवेक से निजी संबंधों के बारे में स्पष्ट और खुली चर्चा करती है ।

2.3.8 समझदार -

सुंदरी समझदार एवं कष्टों में अविचलित रहनेवाली साहसी और हिम्मतवाली नारी है । उसका ऱ्हदय उदार एवं नि:स्वार्थ्य है । वह अपने मतलब और स्वार्थ की कभी सोचती नहीं । अत: सुंदरी ने समाजकार्य के लिए खुद को समर्पित किया है । कुँवर साहब सुंदरी से बुरी हरकत करते हैं उसके बारें में वह सुशीला को लिखती है, "हमें समझदारी और संतुलन के साथ ऐसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है । हम हमेशा अपना सिर नहीं पीटने लगते । पर कुँवर साहब ने कुचेष्ट भर नहीं की, उन्होंने बाकायदा विवाह का प्रस्ताव रखा । भले ही वह प्रस्ताव आवेश में किया हो या, जैसा कि तू कहती है, अपने अपराध को ढकने के लिए ।"[18] इससे स्पष्ट होता है कि सुंदरी एक समझदार नारी है ।

2.4 विवेक -

'बिस्रामपुर का संत' उपन्यास में प्रमुख पात्र के रूप में लेखक ने विवेक का चित्रण किया है । अत: विवेक उपन्यास के केंद्रिय पात्र नहीं है फिर भी एक महत्वपूर्ण चरित्र के रूप में लेखक ने विवेक को चित्रित किया है । जिसे पढ़कर पाठक आत्मविभोर हो जाता है अत: आत्मसोच में भी डूब जाता है । साथ ही स्वार्थी, भष्टाचारी, अनैतिकता, गुंडई इन बातों के प्रति विवेक के मन में घृणा पैदा होती है और यही जीवन की त्रासदी लेखक ने विवेक के जरिए चित्रित की है ।

2.4.1 बुद्धिजीवी और विचारशील पात्र -

विवेक बुद्धिजीवी और विचारशील पात्र है । उसकी चेतना सामाजिक है । सुशीला के साथ विवेक का जो संवाद होता है उससे उसका जीवन दर्शन स्पष्ट होता है । अत: विवेक में दूसरों के व्यक्तित्व विश्लेषण की अद्भूत क्षमता है । विवेक की पढ़ाई गाँव में न होकर शहर में हुयी है अत: विवेक अर्थशास्त्र का प्राध्यापक है । विवेक की सोच कितनी गहरी है यह

निर्मल भाई के साथ जो विवेक का संवाद होता है उससे स्पष्ट होता है । विवेक कहता है, ''मैं सिर्फ इन नयी जोतों के अर्थशास्त्र की बात कर रहा था । पर लगता है कि किसान में आत्मसम्मान के विकास को आप काफी समझते हैं । वैसे, मैं नहीं समझता कि उन्नतिशील खेती और किसान के आत्मसम्मान के बीच कोई अंतर्विरोध है ।''[19]

इससे स्पष्ट होता है कि विवेक बुद्धिजीवी ही नहीं बल्कि विचारशील भी है ।

2.4.2 स्पष्टवादी युवक -

स्पष्टवादी तथा सच्चाई को अपनानेवाला पात्र विवेक है । अत: स्पष्टवादिता विवेक की मूल प्रवृत्ति है । अत: उसकी स्पष्टवादिता और सच्चाई को अपनाने की प्रवृत्ति को लेखक शुक्लजी ने उजागर किया है । विवेक की स्पष्टता निर्मल भाई से बात करते समय स्पष्ट होती है । गांधीवादी विचार और मार्क्सवाद इन विचारधाराओं के संबंधी दोनों में बातें चलती है तब विवेक निर्मल से कहता है, ''नहीं निर्मल भाई, विश्वास करें, मैं आप पर कोई आक्षेप नहीं कर रहा हूँ । मैं तो सिर्फ उस ट्रैजेडी की तरफ इशारा कर रहा था । जो हर बड़े विचारक के साथ होती है । उसके विचारों को अपने संदर्भ से उखाड़कर लोग उन्हें अपनी सुविधा के अनुसार ढाल लेते हैं ।''[20]

उपर्युक्त विवेचन स्पष्ट होता है कि विवेक स्पष्टवादी है । अपने मन में जो है वह पूरे आत्मविश्वास के साथ कह देते है ।

2.4.3 शिष्टाचारी

बुद्धिजीवी और विचारशील व्यक्तित्व को लेकर चलनेवाला विवेक एक शिष्टाचार से ओतप्रोत युवक है । विवेक उपन्यास के अंत तक शिष्टाचार से ही हर एक के साथ बात करता है । विवेक और सुंदरी में राजनीति के संबंध में बहस होती है और सुंदरी ये बहस समाप्त करने के लिए कहती है तब विवेक कहता है, ''बरदाश्त के बाहर है – यही कहना चाहती

है न आप ? पर सच तो यह है कि मैं आपको राजनीति का गंभीर विद्यार्थी समझकर यह विश्लेषण प्रस्तुत कर रहा था और ठंडे दिमाग से किए गए किसी विश्लेषण को भी अगर हम सम्मान अपमान की शब्दावली से जोड़ने लगे तो समझ लीजिए कि राजनीतिक चर्चा का जमाना गया ।"[21]

विवेक सुंदरी को चाय न पीनेपर कहता है, "तब आपके लिए तुलसी और नींब की चाय बना दी जाए ? चाय के नाम से एतराज हो तो उसे काढ़ा समझकर पी लीजिएगा ।"[22] इससे स्पष्ट होता है कि विवेक हर वक्त बिल्कुल शिष्टाचार से बात करता है । विवेक हमेशा अपने पिताजी से भी यहाँ तक सुशीला निर्मल बाई इनके साथ भी शिष्टाचार से पेश आता है ।

2.4.4 वास्तववादी पात्र

विवेक उच्चशिक्षित एक नवयुवक है । विवेक स्वतंत्र भारत की विकोसोन्मुख युवापीढ़ी का प्रतीक बन गया है । जीवन यात्रा में जीवन के प्रति देखने का हर एक का दृष्टिकोण अलग-अलग होता है । कई लोग होते हैं जो जीवन के प्रति निराशावादी दृष्टिकोण से ही देखते हैं तो कई लोग ऐसे भी होते हैं जो दु:ख में भी सुख की तलाश करते हैं और उसमें आनंद प्रप्त कर लेते हैं । अत: ऐसे लोग जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण या वास्तवादी दृष्टिकोण का उपयोग करते हैं ।

अत: विवेक को भी लेखक ने एक वास्तव पात्र के रूप में उजागर किया है । मंत्रीजी, विवेक को कुँवर साहब ने जो लिफाफा छोड़ दिया था वह दे देते हैं । विवेक इतना उतावला नहीं था कि तुरंत वह लिफाफा खोल देगा । "विवेक की उस अवसादपूर्ण मन:स्थिति में भी उत्सुकता ज्यादा सशक्त साबित हुयी । पर कमरे के बाहर सैंकडो लोग उसकी प्रतिक्षा कर रहे थे । उसने लिफाफे को जेब में रख लिया और बाहर चला आया ।"[23] अत: विवेक प्रसंग को ध्यान में रखकर वर्तन करता है । कुँवर साहब की मृत्यु के लिए दूबे महाराज को दोषी

ठहराया जाता है लेकिन इसमें दूबे का कोई हाथ नहीं यह विवेक जान जाता है और "हत्या के अभियोग को जड़ से खत्म कर देने के लिए दूसरे दिन विवेक ने यह पत्र जिला मजिस्ट्रेट और पुलिस कप्तान को दिखाया और यह अभियोग खत्म कर दिया गया ।"[24] प्रस्तुत विवरण से स्पष्ट होता है कि विवेक एक वास्तव पात्र है । जीवन की वास्तविकता को स्वीकार कर चलना पसंद करता है । कल्पना की आवेश में न आकर स्थित वर्तमान को अपनाना अधिक पसंद करता है ।

2.4.5 समझदार युवक -

मनुष्य को जीवन जीने के लिए अर्थ की आवश्यकता होती है उसी तरह कुशल विचार और समझदारी की भी आवश्यकता होती है । आधुनिक समाज जीवन में तो अर्थ के बिना जीवन निरूद्देश्य माना जा रहा है और कुशल व्यवहार, कुशल विचार समझदारी इन्हें मानों नजरअंदाज किया जा रहा है । लेखक शुक्लजी ने विवेक को एक समझदार युवक के रूप में उपन्यास में चित्रित किया है । विवेक सुंदरी की मौत या पिताजी की मौत से विचलित नहीं होता काफ़ी समझदारी से इन प्रसंगों का मुकाबला करता है ।

विवेक, सुंदरी के साथ विवाह नहीं हुआ इसलिए खुद को 'असफल प्रेम' की दोषी में नहीं रखना चाहता । विवेक को यकीन था, "सुंदरी अगर उसके प्रस्ताव को स्वीकार नहीं कर रही है तो उसका कारण सर्वोदय में उसकी अटूट निष्ठा है, जिसके चलते वह अपने लिए चुनी हुई जीवन प्रणाली को बदल नहीं सकती । "[25] अत: सुंदरी के ना कहने पर विवेक के जो विचार हैं वे कितने समझदारी और आदर्शवादी विचार है यह स्पष्ट होता है । एक बार सुशीला विवेक पर सहानुभूति जता रही थी, तब विवेक कहता है, "तुम ट्रेजेडी का अर्थ नहीं समझतीं, तभी ऐसा कह रही हो । ट्रेजेडी एक भयावह चीज़ है । किसी से प्रेम हो और उससे शादी न हो

पाये-यह ट्रेजेडी नहीं है । आज की सामाजिक व्यवस्था में जिंदगी के हजार क्लेशों में यह एक क्लेश भर है ज्यादा से ज्यादा कुछ लंबे दौर का न्यूसेंस है ।''[26]

इन विचारों से विवेक एक समझदार और जीवन के प्रति देखने का वास्तववादी दृष्टिकोण रखनेवाला एक आदर्श युवक उपन्यासकार ने विवेक के जरिए चित्रित किया है ।

2.4.6 नारी के प्रति श्रद्धाभाव -

आमतौर पर समाज में नारी के प्रति देखने का पुरुष का दृष्टिकोण अच्छा नहीं होता । लेकिन लेखक शुक्ल जी के उपन्यास के कुछ व्यक्तिपात्र हैं जो नारी के शील को अधिक महत्त्वपूर्ण स्थान देकर उसकी रक्षा करते हैं । किसी के स्वभाव या नजर में अश्लीलता होती है तो कोई शालीन होता है । अत: उसी के अनुसार वह अपना कार्य व्यापार करता है अत: प्रस्तुत उपन्यास के पात्र विवेक नारी के प्रति 'भद्धाभाव' से देखते हैं । विवेक बुध्दिजीवी पात्र है और अपने विचारों के अनुसार ही वर्तन करता है । पढ़ाई ने मानो उसे एक सशक्त आदमी बनाया है ।

विवेक सुंदरी को चाहने लगता है और उसके साथ शादी करना चाहता है । वह सुंदरी से इतना प्यार करता था कि वह सुंदरी के इतने पास खड़ा था कि सुंदरी को उसके शरीर की उष्मा – तरंगें छूती सी जान पड़ी लेकिन उसने सुंदरी को छुआ तक नहीं । अत: विवेक नारी में जीवन देखता है, नारी को वह पुज्य मानता है । अपने दिल की बात विवेक कुशल ढंग से करता है । विवेक कहता है, ''मेरा विचार है कि मार्क्सवाद और गांधीवाद साथ-साथ रह सकतें हैं । वे एक हो सकते हैं । उसका तरीका यही है कि हम दोनों साथ-साथ रहनें लगें, हमेशा के लिए एक हो जाएँ । ''[27] जाए सुंदरी के ना कहने पर भी वह सुंदरी को कभी गलत नहीं समझता । अत: उसके प्यार में या नजर में भोगवादी वृत्ति का लवलेश मात्र भी नहीं । अत: विवेक नारी को श्रद्धाभाव से देखकर उसे समाज का एक महत्त्वपूर्ण घटक मानता है ।

2.4.7 भूदान के प्रति वास्तववादी दृष्टिकोण -

विवेक जिस तरह स्पष्टवादी है उसी तरह वह वास्तववादी पात्र है । सरकार द्वारा चलाये गए भूदान आंदोलन पर वह विश्वास नहीं रखता । सुंदरी से विवेक ने भूमिहीनों में भूमि – वितरण के बारें में जानकारी ली तब विवेक को लगा कि पूरे कार्यक्रम के छोटे-मोटे पहलू हैं जिन पर अभी विस्तार से सोचा नहीं गया है । जानकारी लेने के बाद विवेक अपनी प्रतिक्रिया करता है, ''इससे तो लगता है कि भूमिहीनों को जमीन देकर हम उन्हें अपनी किस्मत पर छोड़े दे रहें हैं । इस तरह की खेती उनके लिए घाटे का काम होगा । मजदूरी करके वे शायद ज्यादा कमा लें ।''[28] अत: विवेक का मत है कि भूमिहीनों को भूमि देने का कोई अर्थ नहीं है अगर वे आत्मनिर्भर न बन सकें । इसतरह भूदान के प्रति विवेक के विचार स्पष्ट हुए हैं ।

गौण पात्र

प्रस्तुत उपन्यास 'बिस्त्रामपुर का संत' में जो गौण पात्र के रूप हैं वे पात्र भी अपनी कथा को लेकर उपन्यास में प्रकट होते हैं ।

2.5 सुशीला -

वैयक्तिक जीवन में व्यक्ति की एक पहचान होती है वह पहचान सिर्फ उसकी बाह्य आर्थिक स्थिति से या शारिरिक गठन से न होकर उसके संपूर्ण गुणों और विशिष्टताओं से होती है । अत: सुशीला की पहचान भी हमें इसी तरह होती है ।

2.5.1 स्वतंत्र विचारवाली नारी :

सुशीला की एक स्वतंत्र विचारधारा है और वह उसी के अनुसार समाज में कार्य व्यापार करती है । सुशीला निर्मल से विवाह करने का निर्णय स्वयं लेती है और उसके साथ घर बसाती है । सुशीला की शादी तो हो जाती है लेकिन अफसोस की बात, उसका यह विवाह सफल नहीं होता । अत: सुशीला इसके लिए किसी और को दोष नहीं देती यहाँ तक कि अपने

भाग्य को भी दोष नहीं देती । वह मान लेती है कि यह मेरे निर्णय का फल है, इसमें किसी का दोष नहीं है । कुँवर साहब से सुशीला कहती है, ''मेरे साथ जो हुआ है, या जो हो रहा है, वह मेरे ही निर्णय का फल है । मैं बच्ची नहीं थी, खूब सोच-समझकर, जान बुझकर निर्मल से शादी की थी । उसके पहले अपने पूरे विवेक के साथ उन्हें समझना नहीं चाहा । यह मेरी गलती थी । शादी का रास्ता मैंने ही चुना था । भाग्य का इससे क्या लेना-देना ।''[29] अत: सुशीला को स्वतंत निर्णय या विचारों को अपनानेवाले पात्र के रूप में लेखक ने चित्रित किया है ।

2.5.2 भ्रष्टाचार विरोधी नारी -

आज स्वार्थ ने व्यक्ति को इतना अंधा बना दिया है कि मानवता, करूणा आदि भावनाओं का लोप होता जा रहा है । सुशीला एक समाजसेविका के रूप में उपन्यास में प्रस्तुत है । अत: सुशीला भ्रष्टाचार के खिलाफ भ्रष्टाचार का सीधा सरल अर्थ है, भ्रष्ट आचार अर्थात व्यक्ति का ऐसा व्यवहार जो सामाजिक मूल्य, नियम तोड़कर स्वयं का 'स्वार्थ' पूरा करने हेतु किया जाता है । बेईमानी और भ्रष्टाचार की परिभाषा अब जीवन की सुविधानुसार बदलकर एक सामान्य प्रक्रिया बन गयी है । लेकिन शुक्ल जी का 'सुशीला' यह पात्र एक अनोखा पात्र है जो भ्रष्टाचार का विरोध करता है । इससे स्पष्ट होता है कि सुशीला सही मायने में एक सच्ची समाजसेविका है । सुशीला के पति निर्मल भाई जो विदेशों में जाकर 'भूदान' के नामपर भाषण करके काफी रूपए कमाते हैं । अत: यह रूपए सर्वोदयी समाज को अर्पित करने की सलाह सुशीला देती है । सुशीला कहती है, ''उस आमदनी को सरकार के आगे घोषित करके सर्वोदय समाज को अर्पित कर देना चाहिए तो वे मुझे हमेशा आश्वासन देते कि वे ऐसा ही कर रहें हैं । पर मैं बेचैन थी, जानती थी कि ऐसा होगा नहीं ।''[30]

अत: भ्रष्टाचार से निर्मल जो पैसे कमा रहें थे यह बात सुशीला को अच्छी नहीं लगती अत: अपने पति से वह बहस भी करना चाहती है और ऐसा करने से रोक लेना चाहतो है । इससे स्पष्ट होता है कि सुशीला भ्रष्टाचार के विरोधी है ।

2.5.3 स्पष्टवादी नारी -

आधुनिक संस्कृति ने मनुष्य को उन्नत भौतिक सुविधा संपन्न तो बनाया लेकिन उसकी आत्मा को कुचल कर उसे आत्महीन, मूल्यहीन बनाया है । 'स्वार्थ' मानवी जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान ले चुका है । उसी के कारण व्यक्ति का संतुलन बिघड गया है ।

इन बातों की सुशीला घृणा करती है । सुशीला के पति तिहाड़ जेल में सोने की तस्करी के सिलसिले में बंद हैं । सुशीला जानती है कि निर्मल भ्रष्टाचारी है और वह स्पष्ट रूप से कुँवर साहब को कह देती है । सुशीला कहती है, ''उनका कहना है कि सोने के बिस्कुट उनके एक सहयात्री ने चोरी से हैंड लगेज में रख दिये थे । मुझ तक को उनकी इस बात का विश्वास नहीं, कोर्ट को कैसे होगा ?[31]

सुशीला इतनी स्पष्टवादी है कि वह कुँवर साहब से यह भी कहती है कि, ''फिर कुछ नहीं । पहले भी हमारे बीच कुछ नहीं बचा था, अब भी कुछ नहीं । इसीलिए मुझे तलाक की भी जरूरत नहीं पड़ी । पर अब शायद कुछ सोचना पड़ेगा । अपने नाम के साथ उनके नाम का बोझ ढोना अब अच्छा नहीं लगता ।"[32]

सुशीला को एक स्वतंत्र विचारवाली तथा स्पष्टवादी नारी के रूप में शुक्ल जी ने चित्रित किया है ।

2.5.4 कठोर नारी -

नारी की तुलना में पुरूष अत्यंत कठोर स्वभाववाले होते है, यह सही है लेकिन नारी एक बार कठोर हो गयी तो उसे अपने भी बेगाने लगते हैं । सुशीला भी इतनी कठोर है कि

वह पति की भी नफरत करती है । अपना पति निर्मल एक भ्रष्टाचारी है यह बात उसे सताती है और निर्मल के लिए उसका मन कठोर हो जाता है । इतना कठोर कि, वह निर्मल इस नाम से भी नफरत करती है । कुँवर साहब दूवारा बच्चें के बारे में पूछनेपर सुशीला कहती है, "यह मेरा सौभाग्य है, हमारे बच्चे नहीं हुए । यह भी सौभाग्य है कि बच्चों की कमी मुझे कभी खटकी नहीं । जो कहा करते हैं कि नारी की संपूर्णता उसके मातृत्व में ही है, उसके प्रभाव से मैं हमेशा अछूती रही ।"[33]

अत: सुशीला को लेखक ने एक कठोर नारी के रूप में चित्रित किया है । यहाँ तक कि निर्मल जेल में है लेकिन वह कोई फिक्र नहीं करती अब वह निर्मल से बिल्कुल अलग रहना चाहती है । इस विधान से तो सुशीला की कठोरता और भी अधिक झलकती हैं, कुँवर साहब से कहती है, "हाँ, विवेक ने ही दिल्ली में निर्मल के मुकदमें की पैरवी का इंतजाम किया था । मैं अपने को इससे बिल्कुल अलग रखना चाहती थी । पर विवेक के कारण मुझे उसमे उलझना पड़ा । मुझे निर्मल से कोई हमदर्दी नहीं थी । न है ।"[34] इससे स्पष्ट होता है कि नारी भी एकबार कठोर हो गयी तो उसे अपना भी पराया लगता है और उसी तरह ही वह बर्ताव करती है ।

2.5.5 सच्ची समाज सेविका -

सुशीला एक समाजसेविका के रूप में चित्रित है । सुशीला पूर्णत: भ्रष्टाचार के खिलाफ है और इसीलिए ही वह अपने पति का भी धिक्कार करती है । कुँवर साहब सुंदरी से कहते कि भूदान – यज्ञ के प्रति तुम्हारा मोहभंग कैसे हुआ ? इसपर सुशीला तुरंत जवाब देती है, "वह तो वहाँ होगा जहाँ मोह हो । पर मैं किसी मोह से भूदान आंदोलन में नहीं गयी थी । मन में एक तर्कनिष्ठ विश्वास था । वह आज भी है । फर्क बस इतना है कि आज मुझमें सक्रिय समाज सेवा की प्रवृत्ति नहीं बची है । मैं थक गयी हूँ । पर इसका यह अर्थ नहीं कि मेरी आस्था

खंडित हो गयी है । नहीं, मेरा विश्वास अपनी जगह है ।"[35] इससे ही स्पष्ट होता है कि सुशीला की समाजसेवा में कितनी गहरी आस्था है । अत: हम यह भी कहेंगे कि अगर उसकी समाजसेवा में आस्था न होती तो वह जरूर अपने पति के जुर्म को माफ करती, लेकिन सुशीला ऐसा नहीं करती । अत: वह एक सच्ची समाजसेविका है, यही उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है ।

2.5.6 विद्रोही नारी -

नारी का जिस तरह कोमल रूप समाज में विद्यमान है उसी प्रकार उसका विद्रोही रूप भी समाज में प्रचलित है । संसार में स्थित सभी नारियाँ समाज में स्थित रूढ़ी, एवं परंपरा, समाज के आचार-विचारों को जैसे के वैसा नहीं स्वीकारती । औरों की बनी बनायी राहपर चलना सभी नारीयाँ पसंद नहीं करती । अत: एकाद प्रसंग ऐसा आता है कि उसका विद्रोही रूप नजर आता है । अत: लेखक शुक्ल जी ने भी सुशीला को एक विद्रोही नारी के रूप में चित्रित किया है । एक स्पष्टवादी नारी तथा एक सच्ची समाजसेविका विद्रोही बन जाती हैं, पता नहीं यह उसके असफल विवाह कर परिणाम था या जीवन की कुछ दूसरी कंठाओं का । साधारण बातचीत में भी कभी – कभी वह किसी ऐसे अप्रत्यशित बिंदु पर उत्तेजित हो जाती थी कि दूसरों को उसका कारण समझना कठिन हो जाता था । अत: उसकी क्रुरता का निशाना कोई भी हो सकता था, पर सबसे गहरा घाव जिसे लगा वे कुँवर जयंतीप्रसाद सिंह थे ।

सुशीला को कुँवर जयंतीप्रसाद सिंह के व्यवहार में एक अवांछित आत्मसंतोष दिख पड़ा था, उसी को ध्वस्त करने के लिए वह विद्रोही बन जाती है । सुशीला कुँवर साहब पर आरोप लगाती है कि उन्होंने दूसरों की जिंदगी में भयानक उथल-पुथल पैदा की है । अत: सुशीला सोचती है, "वह वहाँ आश्रम में बैढ़कर सोच रहा है कि उसने अपने पुराने पाप का प्रायश्चित कर लिया है । पर उसे मालूम तो हो कि उसके उस पाप की ज्वाला कितनी दूर तक

फैल गयी है और आज भी किस-किस को जला रही है ।"[36] अत: सुशीला सुंदरी के पत्र को भेजकर कुँवर साहब के आत्मसंतोष को ध्वस्त करती है । अत: कुँवर साहब उसी पत्र को पढ़कर पश्चाताप की आग में जलते हैं और अपनी जीवनयात्रा ही समाप्त कर देते हैं ।

इस तरह एक, स्वतंत्र विचारों को अपनाने वाली, सच्ची समाजसेविका तथा स्पष्टवादी नारी अंत में एक विद्रोही नारी बन जाती है ।

सुशीला, सुंदरी और विवेक इन दोनों की शादी न हो पायी इसलिए दु:खी होती है और विवेक को सहानुभूति देने का प्रयास करती है ।

सुशीला के मन में देशप्रेम है, अत: सुशीला एक देशप्रेमी है उसी तरह वह निर्मल से भी प्रेम करती है लेकिन जब वह जान जाती है कि भूदान के नामपर निर्मल भ्रष्टाचार कर रहा है तो वह अपने पति का साथ तक छोड़ देती है ।

सुशीला कुँवर साहब की मौत की खबर सुनकर अपराध बोध से ग्रस्त होती है । वह नहीं जानती थी कि उस पत्र का असर कुँवर साहब पर इतना होगा अत: स्वयं को सुशीला अपराधी महसूस करती है ।

आखिर, इन्सान जिंदगी में कभी-न-कभी परिस्थितिवश विवश बन जाता है, तब कई बार वह पलायनवादी भी बन जाता है । सुशीला भी इतनी विवश होती है कि कुँवर साहब के मृत्यु का कारण विवेक को नहीं बनाना चाहती । इससे स्पष्ट होता है कि सुशीला संवेदनशील होते हुए भी बहुमुखी व्यक्तित्व की नारी है ।

2.6 निर्मल भाई -

शुक्लजी ने अपने उपन्यास में पात्रों के चरित्र में वैचारिकता का ही अधिक चित्रण किया है । वे संपूर्ण समाज को उसके वास्तविक रूप में चित्रित करने की अपेक्षा एक व्यक्ति को विभिन्न परिस्थितियों में रखकर उसके वास्तविक जीवन की सूक्ष्मतिसूक्ष्म छानबीन

करना अधिक उचित समझते हैं । निर्मल ऐसा ही एक व्यक्ति है जो भूदान-आंदोलन के नामपर रूपयें कमाकर भ्रष्टाचारी बनता है परंतु निर्मल की जीवन-सरिता इतनी चौड़ी है कि जिसके अंदर सामाजिक, नैतिक, पारिवारिक समस्याएँ समा गयी हैं फिर भी लेखक ने निर्मल की वैयक्तिकता का ही चित्रण किया है ।

2.6.1 संवेदनशील -

निर्मल में बुद्धि और संवेदना का अद्भुत योग है । निर्मल भाई एक साथ पाँच -छह भाषाएँ जानते हैं, फ्रेंच और स्पैनिश भाषा भी जानते हैं, अत: असाधारण व्यक्तियों में ही ऐसा योग हो सकता है इसलिए निर्मल का व्यक्तित्व असाधारण है ऐसा कहे तो गलत नहीं होगा । उसमें संवेदनशीलता, अनुभूतिगत ईमानदारी है जिससे सुशीला आकर्षित होती है । सुशीला कहती है, ''बहुतसी भाषाएँ जानने वाले को हम यूँ भी विद्वान मान बैठते हैं, निर्मल ने सचमुच ही बहुत अध्ययन कर रखा था ।''[37] अत: निर्मल संवेदनशील होते हुए भी बहुमुखी व्यक्तित्व का धनी है ।

2.6.2 कुशल प्रवक्ता -

निर्मल भाई एक कुशल प्रवक्ता है । निर्मल भाई करीबन पाँच-छह भाषाएँ जानते हैं । अपने विरोधियों पर काबू पाने के लिए उनके पास एक हथियार था-उनकी 'बुलंद आवाज'। अत: उसी आवाज पर सुशीला भी मुग्ध होती थी, ''इतनी खूबसूरत, हवा के हलके झोंके की तरह सहलानेवाली ऐसी आवाज आसानी से सुनने को नहीं मिलती ।''[38] निर्मल की बुलंद आवाज और उसपर लहरें लेता हुआ शब्दों का चमत्कार इन्हीं गुणों को देखकर ही सुशीला उनकी ओर आकर्षित हो गयी थी । निर्मल इतने प्रतिभाशाली प्रवक्ता थे कि उन्हें व्याख्यान के लिए विदेशों में भी भेजा जाने लगा । अत: निर्मल अपना काम ईमानदारी से निभा रहे थे, तभी तो उन्हें बाहर से बराबर निमंत्रण मिलने लगे ।

मार्क्सवादी और गांधीवादी विचारधाओं के बारे में विवेक और निर्मल में कुछ बहस चलने लगती है तब विवेक कहता है कि, ''गांधीवादियों ने गांधी के विचारों को प्राय: ठिक ढंग से नहीं रखा है ।'' इस पर निर्मल भाई बड़ी आदर्शवादी भाषा में, ''यह भी ठिक है और वह भी ठिक है''[39] कहकर अपनी बात आगे बढाता है । जैसे सार्वजनिक भाषण देनेवाले शिक्षित और चतुर वक्ताओं का सुपरिचित और अभ्यस्त तरीका है । इससे स्पष्ट होता है कि निर्मल भाई एक कुशल और चतुर प्रवक्ता है । निर्मल निश्चित रूप से प्रसंग को जानकर बाते करते हैं । उपर्युक्त विवरण से निर्मल एक कुशल प्रवक्ता होने का परिचय मिलता है ।

2.6.3 सत्ता का दुरूपयोग -

गलत लोगों के हाथ में सत्ता हो तो उसका परिणाम समाज के सामान्य जनता पर ही अधिक होता है । जिस स्थानपर सही आदमी होना चाहिए, उस स्थान पर गलत आदमी की नियुक्ति हो जाए तो सत्ता का दुरूपयोग अधिक होने लगता है । सामान्य आदमी उनके हाथों से बच भी नहीं सकते हैं अत: ऐसे लोग अपनी गलतियाँ सुधारे बिना अधिक गलतियाँ करते रहते हैं । जिसकी किमत समाज को, परिवारवालों को देनी पड़ती है । उपन्यासकार ने इस बात को निर्मल भाई के दूवारा उजागर किया है ।

प्रस्तुत उपन्यास में निर्मल भाई भूदान – आंदोलन में एक नेता के रूप में प्रवेश करते हैं वे एक सक्रिय कार्यकर्ता है और इसीसे उनका नाम मशहूर हुआ है । अत: वे एक अच्छे और प्रभावशाली प्रवक्ता होने के कारण उन्हें भाषण देने के लिए विदेशों में भेजा जाने लगा । निर्मल शुरूआती के दिनों में अपना काम ईमानदारी से कर रहे थे लेकिन कुछ ही दिनों में उनके असली रूप का पता चलता है । निर्मल को जो आमदनी मिलती थी वह उसका उपयोग अपने स्वार्थ के लिए करने लगा । यहाँ तक कि पश्चिमी वातावरण उसे भाँने लगा और स्वदेशी वातावरण उसे अनचाहा सा लगने लगा । आखिर एक दिन भ्रष्टाचार की दुनियाँ में फँसकर

निर्मल भाई जेल में बंद हो जाते हैं । अत: निर्मल की इस गलती का कष्ट सुशीला को भुगतना पड़ा, वह अकेली हो गयी, उसका वैवाहिक जीवन ही मानों समाप्त सा हो गया ।

इससे स्पष्ट होता है कि सत्ता योग्य व्यक्ति के हाथ में होनी चाहिए, तभी सामाजिक सुधार हो सकता है, नहीं तो समाज में अनाचार ही अधिक बढ़ता रहता है । सुव्यवस्थापन के लिए योग्य व्यक्ति को ही चुनना चाहिए पर कभी – कभी ऐसा भी होता है कि योग्य व्यक्ति भी अपने स्वार्थ से प्रेरित होता है और सत्ता का दुरूपयोग करता है । इस तथ्य को लेखक ने निर्मल भाई के द्वारा स्पष्ट किया है ।

2.6.4 भयग्रस्त -

जब व्यक्ति के जीवन में असुरक्षा की भावना निर्माण होती है तब भय का निर्माण होता है और व्यक्ति में उस परिस्थिति से पलायन की प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है । वैसे भय के अनुभव सुखद नहीं होते फिर भी जीवन में उसकी उपयुक्तता होती है, अत: भय के कारण मनुष्य जागरूक होता है । उसके बर्ताव पर नियंत्रण आ जाता है । कभी – कभी यह भय इतना प्रबल रूप धारण कर लेता है कि व्यक्ति का व्यवहार तथा जीवन शैली को ही बदल देता है।

निर्मल भाई आमदनी अपने स्वार्थ के लिए अपनाते रहे । कुछ दिनों बाद भ्रष्टाचार भी करने लगते हैं और सोने की तस्करी में फँस जाते हैं । उनके असली रूप की पहचान होने पर उनकी पत्नी, सुशीला भी उनका साथ छोड़ देती है । आखिर उनके मन में एक भय – सा निर्माण होता है और अपना जुर्म एक सहयात्री पर ढ़ोना चाहते हैं । इससे स्पष्ट होता है कि निर्मल की मानसिकता भयग्रस्त बन जाती है, अत: उसे सहानुभूति की भी कोई मदद नहीं करता ।

अत: निर्मल भाई भूदान आंदोलन के नामपर पैसे कमाने लगें । सुशीला कुछ पूछने पर निर्मल भाई उसके साथ भी झूठ बोलने लगे । निर्मल भाई कहते हैं कि मैनें स्वयं को

सर्वोदय समाज को अर्पित किया है। इसतरह निर्मल भाई-भूदान आंदोलन में सक्रिय रहनेवाला एक कार्यकर्ता अपनी पत्नी सुशीला से भी झूठी बातें करने लगा ।

2.7 दुबे महाराज -

2.7.1 व्यसनाधीन -

व्यसनाधीनता एक गंभीर सामाजिक समस्या है । जीवन में उत्पन्न दु:ख, चिंता, तनाव,अभाव, विफलता आदि को भूलाने के लिए व्यक्ति मद्यपान करता है । कुछ लोग ऐश के लिए मद्यपान करते हैं तो कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो अपने शौक के लिए मद्यपान करते हैं । अत: ऐसे व्यक्ति मद्यपान के बिना जी ही नहीं सकते, परिणामत: व्यक्ति मद्यपान का आदि बन जाता है । अत: मद्यपान के कारण ऐसे व्यक्ति का बर्ताव विकृतसा हो जाता है । यही मानसिकता को लेखक ने दुबे महाराज के माध्यम से स्पष्ट किया है । कुँवर जयंतीप्रसाद सिंह किसानों के जमीन के प्रस्ताव के बारें में उनसे बात कर रहें थे और यह प्रस्ताव आप लोग कब तक देंगे ? ऐसा सवाल वे किसानों से करते हैं । दूबे द्वार पर खड़ा था और वही से चिल्लाकर कहता है 'कभी नहीं ।' कुँवर साहब दूबे को नहीं जानते थे इसलिए वे पूछते हैं कि ये कौन है ? इसपर दुबे महाराज कहते है, ''मैं तुम्हारा बाप हूँ,'' कहकर दुबे महाराज ने नशे से लडखड़ाती आवाज से दहाड़ लगायी, ''खबरदार, इस बुढ़े खूसट के चक्कर में न पड़ना । मैं अभी जिंदा हूँ ।''[40] इससे भी आगे दुबे महाराज कहते हैं, ''ज्यादा लाट साहबी न छाँटो बुढ़ऊ, नहीं तो भूनकर रख दूँगा ।''[41]

आधुनिक जीवन में मानवीय मन अधिक भावनिक बन गया है । जीवन में अपयश आने के कारण आदमी भौतिक वस्तुओं का सहारा ले रहा है । अत: व्यसन ने दुबे के मस्तिष्क पर अपनी सत्ता प्रस्तापित की है, इसलिए उसका बर्ताव, व्यवहार उसकी मानसिकता व्यसनाधीन होने का उदाहरण है ।

2.7.2 दुबे का मानसिक द्वंद्व -

दुबे के चरित्र में मानसिक रूप परस्पर विरोधी विशेषताएँ पायी जाती है । इससे उसका द्वंद्व ही स्पष्ट होता है, वह एक ओर साहस और नीड़रता से काम लेता है तो दूसरी ओर परिस्थिति के थपेडों में आकर डरपोक बन जाता है, अत: इन विशेषताओं से उसका मानसिक द्वंद्व ही सामने आता है । अत: उसकी नीड़र एवं साहसी वृत्ति उसके प्रस्तुत कथन से स्पष्ट होती है । कुँवर जयंतीप्रसाद सिंह नदी में कूदकर आत्महत्या करते हैं । उन्हें बचाने के लिए दुबे महाराज स्वयं नदी में कुदते है और कुँवर साहब को बचाने की कोशिश करते हैं लेकिन उससे पहले ही कुँवर साहब मर चुके थे । इतने में रामलोटन वहाँ आकर कुँवर साहब की मौत का इलजाम दुबे पर लगाता है, तब दुबे कहते हैं, "सुनो, सुनो, मैं इसे क्यों मारूँगा ? यह बेचारा डुब रहा था । मैं तो इसे बचाने के लिए कूदा था ।"[42] इससे स्पष्ट होता है कि दुबे जितने साहसी हैं उतने ही डरपोक हैं इससे उसकी द्वंद्वपूर्ण मानसिकता ही स्पष्ट होती है ।

2.7.3 डरपोक तथा पलायनवादी -

मनुष्य कितना भी साहसी और नीड़र क्यों न हो, एकाद प्रसंग ऐसा निर्माण होता है कि उसी स्थान पर डरपोक बन जाता है । जीवन में उत्पन्न दु:ख को, कष्टको भूलाने के लिए, आए हुए प्रसंग का सामना करके बीना ही वह डरपोक की तरह पलायन करना चाहता है, वह इन बातों से तंग आ जाता है और इससे उसका मन भागना चाहता है । अत: जीवन में ऐसा प्रसंग निर्माण होने के बाद व्यक्ति में आत्मविश्वास का ऱ्हास होने लगता है और आत्मविश्वासहीन मानसिकता में डरपोक बनकर भागने की कोशिश करता है । अत: दुबे की मानसिकता डरपोक तथा पलायनवादी ही है । दुबे का पूर्ण विश्वास है कि कुँवर साहब को उसने नहीं मारा है बल्कि वह कुँवर साहब की जान बचाना चाहता था । दुबे रामलोटन से कहता है, "देर हो गयी, मैं जब नदी में कूदा, उनकी साँस पहले ही टूट चुकी थी।"[43] फिर भी रालोटन का तेवर देखकर दुबे

महाराज वहाँ से भाग जाते हैं । इससे स्पष्ट होता है कि उनकी मानसिकता डरपोक और पलायनवादी है । दुबे बहुत दूर तक भागता चला जाता है, अत: वह पीछे मुड़कर तक देखता नहीं, और जब उसे भरोसा हो गया कि पीछे कोई नहीं आ रहा है, तब उसकी चाल धीमी हो जाती है । इससे दूबे के डरपोक तथा पलायनवादी प्रवृत्ति का परिचय होता है ।

2.7.4 मजदूरोंका / किसानोंका शोषक -

शुक्ल जी का 'बिस्रामपुर का संत' यह एक सामाजिक उपन्यास है, इनमें किसानों के जनजीवन के शोषण का भी वर्णन हुआ है जो वर्तमान किसान,मजदूर जीवन को भी मूर्त करता है । शोषण परंपरा वर्गव्यवस्था का मूल कारण रही है । इसी शोषणनीति ने भारतीय समाज व्यवस्था में विषमता की दरारें पैदा की है । ऊँच-नीच, अमीर-गरीब, श्रमिक-पूँजीपति जैसे विषम वर्गो को बढ़ावा दिया है । इस प्रकार की विषम समाजव्यवस्था एवं अर्थव्यवस्था के मूल में शोषण ही कारण रहा है । चाहे वह शोषण सर्वहारा वर्ग के सामाजिक अधिकारों का हो, सुरक्षा का हो, आर्थिक स्तर का हो, शारीरिक मानसिक स्तर का हो यह तो-युग-युग से चलता आया है ।

प्रस्तुत उपन्यास में दुबे एक शोषक के रूप में चित्रित है । दुबे किसानों का शोषण किस तरह करते थे इसका स्पष्ट चित्रण उपन्यासकार ने किया है । ''कर्ज अदायगी के लिए दुबे महाराज ने सदस्य किसानों के शोषण का नया तरीका निकाला । उसने मजदूरों की मजदूरी से कटौती करके एक ऋणअदायगी फंड बनाया और मजदूरी की कटौती का वह पैसा, जो उसकी अपनी जेब में न गया हो, इस फंड में डालना शुरू किया ।''[44] इससे स्पष्ट होता है कि यह शोषण मजदूर वर्ग का सर्वांग शोषण है , जो किसान वर्ग की वास्तविक जीवन पद्धति को प्रस्तुत करता है । अत: मजदूरों को शोषित अपनी सुरक्षा, अपने अधिकार खुद लड़कर ही हासिल करने होंगे ।

कर्ज अदायगी के लिए दुबे ने छोटे किसान, मजदूर इनकी जमीन भी रेहन में रखने के लिए किसानों को मजबूर किया । रामलोटन जैसे किसानों का जबरदस्ती से अंगूठा लेकर उनकी जमीन पर कब्जा किया । अत: दुबे अपने निजी स्वार्थपूर्ति के लिए मजदूरों का खून चूसता है , उन्हें उनकी ही जमीन पर मजदूरी करने के लिए विवश करता है, अत: यह परिस्थिति अत्यंत भयावह है । अत: शुक्ल जो ने दूबे महाराज के माध्यम से एक शोषक का सही रूप चित्रित किया है । इससे स्पष्ट होता है कि शोषण – यह समस्त मानवजाति का शापित वास्तव है और यही कारण है कि समाज का एक वर्ग दूसरे वर्ग के प्रति समान भाव नहीं रखता । उच्च धनिक वर्ग हमेशा ही निम्न वर्ग के प्रति हीन भावना रखता है, तो सत्ता-संघटित के अभाव में निम्न वर्ग, जमींदार वर्ग के प्रति भय की दृष्टि से देखता है, जिससे वह अन्याय और अत्याचार को सहता है । उसका खुलकर विरोध करने की उसकी हिम्मत नहीं होती । अत: इसी तथ्य को लेखक शुक्ल जी ने दुबे महाराज और रामलोटन जैसे किसानों के जरिए उजागर किया है ।

2.7.5 भ्रष्टाचारी -

भ्रष्टाचार मूलत: अर्थ – क्षेत्र से जुडा हुआ है । पैसा मनुष्य की अनिवार्य आवश्यकता है । पैसों के बिना आज व्यक्ति अपना जीवन-व्यापन नहीं कर सकता, अत: जिंदगी ठिक से बसर करने के लिए रूपिया कमाना, बनाये रखना आवश्यक है, किंतु जब व्यक्ति मेहनत का सरल, नेक रास्ता छोड़कर, बिना कष्ट उठाये गलत रास्ते से पैसे हड़प करने लगता है तो वह भ्रष्टाचारी बन जाता है ।

इसी तथ्य को लेखक शुक्ल जी ने दुबे महाराज के चरित्र द्‌वारा स्पष्ट किया है । बिस्त्रामपुर में जो कोऑपरेटिव फार्म है उस फार्म का मैंनेजिंग डाइरेक्टर दुबे महाराज है । उनका ही एक चचेरा भाई जो पागल से भी बहतर है, उसे दुबे महाराज कोऑपरेटिव समिती का अध्यक्ष बनवाते हैं । इस तरह इस फार्म का प्रबंध इस जोडी के हाथ में है । इससे स्पष्ट होता है कि उनकी

काबिलियत हो या न हो पर वे जमींदार, साहुकार है इसलिए सत्ता उन्हीं के हाथ में है । सरकारी बैंको से जो कर्ज मिलता था उसका उपयोग दुबे अपने स्वार्थ के लिए करता है, अत: फार्म घाटे पर चलता है और कर्ज का भुगतान करने लिए भी फंड में पैसा ही नहीं बचता । इसका स्पष्ट उल्लेख उपन्यासकार ने किया है । ''उनका भुगतान फार्म को अपने फंड से करना था । पर फार्म बराबर घाटेपर चल रहा था। अनुदान और कर्ज के रूपयों को छोड़कर उसके फंड में कुछ था ही नहीं ।'' [४५] इससे दुबे का भ्रष्टाचारी रूप स्पष्ट होता है । गरीब किसान या मजदूरों को जब पैसों की आवश्यकता होती है तब दुबे से ये लोग सूद पर पैसे लेते है । दुबे महाराज पैसों के बदले उनकी जमीन रेहन में रखवा लेता है और सूद पर सूद बढ़वाकर एक दिन उनकी जमीन अपने कब्जे में ले लेता है ।

अत: दुबे भ्रष्ट, लाचार, स्वार्थी है । किसानों का शोषक के रूप में लेखक ने उसे चित्रित किया है । दुबे का चरित्र स्वाभाविक रूप से यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत होता है ।

इस प्रकार दुबे का चरित्र गुंडा की प्रवृत्ति से परिपूर्ण शोषक वर्ग का चरित्र है ।

2.8 जयश्री -

2.8.1 सौंदर्यवती -

प्रेम और सौंदर्य का घनिष्ठ संबंध है । सौंदर्य ही मनुष्य के हृदय में प्रेम का निर्माण करता है । अत: स्त्री पुरुष प्रेम संबंध और सौंदर्य का घनिष्ठ संबंध है, स्त्री-पुरुष ईश्वर की सब से सुंदरतम कृति है, जो अपनी शरीरिक और मानसिकता के कारण सुंदर है । सौंदर्य का दिव्य स्वरूप स्त्री-पुरुष प्रेम से ही अभिव्यक्त होता है ।

प्रस्तुत उपन्यास में चित्रित जयश्री सौंदर्यवती नारी है, जिसका सौंदर्य देखकर कुँवर साहब उसकी ओर आकर्षित होते है । उसके सौंदर्य का वर्णन उपन्यास में स्पष्ट किया है । ''संपन्न परिवारों की दर्जनों युवतियोंके संपर्क में आते रहने के बावजूद उन्होंने इतनी उद्दाम

लालसा का अनुभव कभी नहीं किया था ।''[46] अत: कुँवर साहब की आँखे बराबर जयश्री को खोजने लगती है, जयश्री के बिना कुँवर साहब मानो पागल से हो जाते हैं ।

2.8.2 अतृप्त -

नारी जब पति से विवाह बंधन में बंध जाती है तब पति ही उसका सर्वस्व होता है ऐसी परंपरागत धारणा है लेकिन अनमेल विवाह, पति के परस्त्रीगामी होने आदि कारणों से नारी अतृप्त बनी रहती है । इसलिए वह इस अतृप्ति की पूर्ति आधुनिक रूप अपनाकर विवाहबाह्य संबंधों द्वारा करती है । अत: अधिकतर नारियाँ इसी कारण प्राकृतिकथौन इच्छा तथा मानसिक रूप से अतृप्त बनी रहती हैं। अत: वह पतिव्रता की पवित्रता नहीं निभाती, इसकी तृप्ति विवाहबाह्य संबंधों द्वारा प्राप्त करती हैं । इसी वृत्ति को लेखक शुक्ल जी ने जयश्री के माध्यम से स्पष्ट किया है ।

जयश्री का पति वेदेश में रहने के कारण जयश्री अपने सास-ससुर के साथ रहती है । अत: जयश्री पति से अतृप्त बनने पर परंपरागत मान्यताओं को उखाड़कर विवाहबाह्य संबंध रखकर शरीर की तृप्ति करती है । इसका स्पष्ट चित्रण उपन्यास में हुआ है, ''वे अंधे नहीं थे । फिर भी उन्हें पता नहीं चला कि उनके कमरे का दरवाजा कब खुला, कब बंद हुआ और जयश्री वहाँ कब आ गयी । उसकी मौजूदगी का एहसास उन्हें तभी हुआ जब वह पास आकर बैठी, बगल में लेट गयी और उन्हें अपनी बाहों में समेटने लगी ।''[47] इससे यही स्पष्ट होता है कि पति नौकरी आदि कारणों से अन्य स्थान पर होने से पत्नी अतृप्त बनी रहती है । इसलिए अगर जयश्री जैसी नारी हो तो वह पति की राह देखती हुयी अतृप्त बन जीवन कंठित नहीं करती बल्कि इसकी तृप्ति विवाहबाह्य संबंधों द्वारा पूर्ण करती है । अत: कुँवर साहब जयश्री को बार–बार बुलाने पर भी उसके कमरे में नहीं जाते तो खुद जयश्री उनके कमरे में आकर अपने शरीर की तृप्ति करती है ।

2.8.3 परिवर्तनशील -

जयश्री के जीवन पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट होता है कि वह एक परिवर्तनशील पात्र है । जयश्री के पति विदेश में रहते थे अत: जयश्री की काम वासना अतृप्त थी, वह कुँवर साहब की ओर आकर्षित होकर अपने शरीर को तृप्त करती है लेकिन जयश्री के पति उसे साथ ले जाने के बाद उसके स्वभाव और रहन-सहन में भी परिवर्तन होता है । दुर्भाग्य यह है कि वही पर किसी दुर्घटना में उसकी मौत होती है । उसके बारे में कुँवर साहब खुद कहते, ''तब वह चौबीस साल पहले की उद्दाम आवेगोंवाली तन्वंगी नहीं रह गयी थी , उसकी जगह एक प्रौढ़ आयु, सुसंस्कृत व्यवहार और विस्तीर्ण सामाजिक अनुभवोंवाली, एक वरिष्ठ आई. सी. एस. की जीवनसंगिनी ने ले ली थी जिसके आचरण पर कोई उँगली नहीं उठा सकता था ।''[48] इससे स्पष्ट होता है कि जयश्री में कितना परिवर्तन हुआ है । कुँवर साहब के रंगो में रंगनेवाली जयश्री में इतना परिवर्तन होता है कि स्वयं कुँवर साहब उसके घर में आने पर वह उनका बड़े दिल से स्वागत करती है लेकिन उसमें कुछ लालसा या वासना का नाम मात्र भी नहीं । वह कुँवर साहब का इतने सम्मान के साथ स्वागत करती है कि कुँवर साहब को भी आश्चर्य होता है । वैसे तो जयश्री और उनका नौकर घर में था फिर भी जयश्री अकेले में उनके साथ बैठकर बात तक नहीं करती । कुँवर साहब को वह बिल्कुल आत्मीयता से कहती है, ''मैं सवेरे कुछ देर से उठती हूँ । आपको बेड़–टी की जरूरत हो तो इस स्विच को दो बार दबाएगा । खानसामा आ जाएगा ।''[49] इससे स्पष्ट होता है कि जयश्री कितनी सुसंस्कृत और शिष्टाचारी बनती है ।

2.9 जयश्री के पति -

प्रस्तुत उपन्यास में जयश्री के पति के नाम का उल्लेख लेखक ने कहीं भी नहीं किया है फिर भी उनके चारित्रिक विशेषताओं को देखना आवश्यक है ।

2.9.1 नौकरीपेशा तथा बुद्धिमान -

प्रस्तुत उपन्यास के पात्र, जयश्री के पति भी एक नोकरीपेशा युवक है, वे अपनी नौकरी के माध्यम से अपने जीवन को सजाना-संवारना चाहते हैं इसलिए पहले शादी करके, और जहाँ रहते हैं वहाँ सब सुविधाओं से संपन्न ऐसा घर बनाकर अपनी पत्नी जयश्री को ले जाते हैं।

जयश्री के पति एक बुद्धिवान और होशियार आदमी हैं । वे विलायत में शिक्षा पाकर इंडियन सिविल सर्विस में शामिल हुए हैं । हमारे देश की आजादी से भी पहले उन्हें काफी आकर्षक पद मिले थे । उनके बुद्धिमान होने का सबुत लेखक ने उपन्यास में स्पष्ट किया है । ''ऊँचे दर्जे की नौकरियों में कभी कभी ऐसा अजूबा देखने को मिलता है जो औसत दर्जे का यानी बिलकुल मीडियोकर होते हुए भी आश्चर्यजनक रूप से सफलता की सीढ़ियाँ लाँघता चला जाता है और असाधारण समतावाले सहकर्मी साधारण चाल से चलते हुए उसे देखते रह जाते हैं । जयश्री का पति ऐसा ही अजूबा था ।''[50] इससे स्पष्ट होता है कि जयश्री के पति एक बुद्धिमान और होशियार आदमी हैं ।

2.9.2 पत्नी पर विश्वास रखनेवाला -

जब तक पति – पत्नी परस्पर की भावना को पहचान कर, परस्पर सहयोग और एक दूसरे की हीत की ओर ध्यान देकर जीवन जीते रहते हैं तब तक उनका प्रेम संबंध उचित रूप में बना रहता है । इसी तथ्य को जयश्री के पति जानते हैं, वे एक बुद्धिमान युवक हैं इसलिए अपनी पत्नीपर भी पूर्ण विश्वास रखते हैं । उनके ही घर मेहमान के रूप में कुँवरसाहब आते हैं, लेकिन कुछ काम की वजह से उन्हें कलकत्ता जाना पड़ता है ओर वे दो दिन-तक नहीं आ पाएगें । वे कुँवर साहब से कहते है, ''मुझे कितना अफसोस है कि आपके साथ यह वक्त

KOLHAPUR

बिताने का मौका चुक गया, कि अपने घर जैसा महसूस कीजिए, जयश्री तो है ही ।"[51] इससे स्पष्ट होता है कि उन्हें अपनी पत्नी पर किता अटूट विश्वास है ।

2.9.3 असफल दांपत्य जीवन -

प्रस्तुत उपन्यास में जयश्री के पति इतने बड़े हैं लेकिन उनके नसीब में दांपत्य जीवन नहीं है, अत: उन्हें वैवाहिक जीवन का आनंद ही नहीं मिला ऐसा कहा तो कोई गलत नहीं होगा ।

पुरुष पहले से ही विवाहबाह्य, अवैध प्रेम संबंध रखता आया है लेकिन हमारे समाज में एक तरह से औरत को अवैध प्रेम रखना मना है । पर वर्तमान नारी अपने पति से प्रेम न पाने या पति दूर होने के कारण तथा अपनी स्वच्छंदी भावना के कारण विवाह बाह्य प्रेमसंबंध को अपनाती है । जैसे प्रस्तुत उपन्यास में जयश्री कुँवर साहब के साथ प्रेम-संबंध रखती है । इससे स्पष्ट होता है कि वह अपने पति को धोखा देती है, पति से फरेब करती है । जयश्री के पति उसे विदेश ले जाते हैं लेकिन वहाँ जाकर वह शराबी बनती है और दुर्घटना में उसकी मौत हो जाती है । इससे स्पष्ट होता है कि उनका दांपत्य जीवन बिलकुल दु:ख की गाथा ही है ।

अत: दांपत्य जीवन में एक-दूसरे पर विश्वास होना कितना महत्त्पूर्ण है इस तथ्य को लेखक ने जयश्री तथा उसके पति के माध्यम से स्पष्ट किया है । विश्वास न हो तो वह दांपत्य जीवन बिलकुल स्मशान बन जाता है ।

2.10 रामलोटन -

प्रस्तुत उपन्यास में रामलोटन शोषित वर्ग का प्रतिनिधि बनकर उपन्यास में चित्रित है । लेखक ने किसानों के शोषण की वास्तविकता को गहराई से प्रस्तुत किया है । वैसे शोषण की समस्या भारत देश में आदिम युग से चलती आयी है । बड़ी ताकद हमेशा ही निम्न वर्ग का शोषण करती आयी है ।

रामलोटन की जमीन पर दुबे महाराज कब्जा कर लेता है । दुबे हमेशा किसानों का शोषण करता चला आया है, अत: उनपर अन्याय-अत्याचार करना, मजबूरी से उन्हें मजदूर बनाना यह तो दुबे का नित्यक्रम ही था । कुँवर साहब से अपनी जमीन के बारे में रामलोटन कहता है, ''क्वाप्रेटिव वाहनी जमीन तो मालिक क्वाप्रेटिव के साथ गयी, बाप दादों का खेत भी लेती गगी ।''[52] दुबे महाराज किसानों को मानो गुलाम जैसा ही समझता है और इसका शिकार रामलोटन बन गया है इसलिए रामलोटन कुँवर साहब से कहते हैं कि, ''वही तो हर काम के कर्ता-धर्ता है ।''[53] इससे स्पष्ट होता है कि गमलोटन एक शोषित के रूप में चित्रित है ।

काफी दिनों तक रामलोटन दुबे महाराज का अन्याय अत्याचार सह लेता है लेकिन एक दिन इतना साहसी, नीड़र बनता है कि अपने अन्य किसान साथियों को लेकर खेती में हल चलाता है । वह खेती पीछले तीन चार साल से दुबे ही कर रहा था लेकिन वह खेती अपनाने के लिए रामलोटन मारपीट या संघर्ष से भी डरता नहीं, दुबे के लोगों से संघर्ष करता है । कुँवर साहब को पता चलने पर वह उनसे कहता है, ''तमाशा नहीं है मालिक, इन्हीं चरणों का प्रताप है । दुश्मन को खेतोंसे खदेडकर भगा दिया है, खेतो में बीज भी छिटका दिया है ।''[54] इससे स्पष्ट होता है कि रामलोटन अन्याय-अत्याचार के प्रति संघर्ष करना चाहता है । पहले रामलोटन की जगह इस शूर—वीर रामलोटन ने ली है । कुँवर साहब को रामलोटन कहता है – ''एकबार जब हमने अपना खेत जोत लिया तो दुबे के पुरखें भी उतर आवें, खेत की मेड़ पर पाँव नहीं धरने पाएँगे ।''[55] इससे रामलोटन एक आत्मविश्वासी ऐसा किसान स्पष्ट होता है । रामलोटन आत्मविश्वास को बनाए रखना चाहता है लेकिन वह अपने क्रोध पर काबू नहीं कर सकता । कुँवर साहब की मौत का आरोप दुबे पर लगाते हुए रामलोटन उसे खुब पीटता है, ''मार-डालूँगा । तूने ही इन्हें नदी में डुबोकर मारा है । अब साला नौटंकी कर रहा है ।''[56]

इससे स्पष्ट होता है कि रामलोटन तुरंत ही क्रोधित होता है और स्वयं को ही संभाल नहीं पाता, सामनेवाले पर टूट पड़ता है ।

अत: रामलोटन प्रस्तुत उपन्यास में एक शोषित पात्र जरूर चित्रित हुए है पर उसके आत्मविश्वास और साहसी वृत्ति को भी लेखक ने उजागर किया है ।

2.11 रेड्डी -

प्रस्तुत उपन्यास में रेड्डी एक गौण पात्र के रूप में प्रस्तुत है लेकिन उसके माध्यम से लेखक ने अपने मत को व्यक्त करने का भारी सरकस प्रयास किया है । इस उपन्यास में रेड्डी एक ऐसा पात्र है जो कहीं पर चंचल है तो कहीं पर दूरदर्शी है, कहीं-कहीं पर बातूनी भी है, तो कहीं पर गंभीर सोच विचारवाले दिखायी देते हैं । प्रधानमंत्री का विश्वासू तथा कुँवर जयंतीप्रसाद सिंह का एक दोस्त और सलाहगार के रूप में भी दिखाई देता है । कुँवर साहब और रेड्डी में खुलकर बातें होती है अत: एक दूसरे पर ज्यादा देर तक गुस्सा भी नहीं करते । एक महिला डॉक्टर कमरे में आकर कुँवर साहब की तबियत देखकर चली जाती है, तब रेड्डी को कुँवर साहब कहते हैं, "तुम्हें देखते वह समझ गयी थी कि तुम कैसे आदमी हो । तभी वह कमरे में रूकी नहीं ।"[57] इससे स्पष्ट होता है कि वे दोनों अच्छे मित्र हैं, अत: एक दूसरे की खिल्ली भी उड़ाते हैं ।

रेड्डी का हँसी मजाक का व्यक्तित्व का परिचय हमें हर समय होता है । साथ ही वे गंभीरता भरी निगाह से भी देखते हैं जैसे, कुँवरसाहब रेड्डी से कहते हैं कि, "मैं इस लड़की को बहू बनाना चाहता हूँ ।"[58] इस पर वे गंभीर हो जाते हैं परंतु हर समय हँसी उड़ाकर, मजाक के साथ हर बात को ले जाने की उनकी अदाकारी कुछ अलग सा व्यक्तित्व प्रदान कर देती है । रेड्डी उपन्यास में एक मंत्री के रूप में है लेकिन वे कभी सिरिअस नहीं दिखायी देते, अत: यह

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

साधु - फकीर तो है नहिं परंतु मौका मिलते ही मौके का फायदा उठानेवालों में से एक नजर आते हैं ।

2.12 रावसाहब -

रावसाहब प्रस्तुत उपन्यास में एक गौण पात्र के रूप में चित्रित हैं । रावसाहब की उम्र साठ–पैंसठ साल की है किंतु फिर भी वह एक तंदुरूस्त नौजवान से कम नहीं । उसकी उम्र साठ पैंसठ साल की होते हुए भी वह दस-बारह साल के बच्चों से गुल्ली डंडा खेलता है और एक चुस्त एवं तंदुरूस्त नवयुवक की भाँति फूर्ती से अपने शारीरिक क्रियाकलाप करता है । उसके इस अनोखे व्यक्तित्व की प्रतीति तब होती है जब वह गुल्ली डंडा खेलते समय गुल्ली की नोक पर डंडा मारकर गुल्ली को दूर फेंकने के बजाय ऊपर उछाल देता है । अत: इस अनोखे व्यक्तित्व का चित्रण उपन्यास में स्पष्ट हुआ है । ''उसने गुल्ली की नोक पर डंडा मारा पर गुल्ली को दूर फेंकने के बजाय ऊपर उछाल दिया । इसके लिए उसे कमर टेढ़ी करके जिस्म के ऊपरी भाग और सिर को फुर्ती से घुमाना जरूरी था और जिस सहजता से उसने किया वह एक चुस्त और तंदुरूस्त आदमी के लिए ही संभव था ।''[59]

यद्‌यपि रावसाहब जंगल में रहकर भी बाहरी विश्व के विभिन्न घात-प्रघातों से अवगत हैं । उसके सामान्य ज्ञान के परिचय से सुशीला आश्चर्य प्रकट करती है । उसके व्यक्तित्व का और भी एक महत्वपूर्ण पहलू है कि वे हँसमुख स्वभाववाले व्यक्ति हैं । जयंती को लेकर वह कहता है, ''इस जयंती को ही लो । मैं मिलने के लिए इसे ढूँढता रहता हूँ, हाथ ही नहीं आता । अपनी ओर से आज यह बरसों बाद दिखायी दिया है ।''[60] इसके अतिरिक्त सुशीला के संबंध में भी वह कहता है, ''अच्छा हुआ कि आजादी आ गयी । वर्ना अंग्रेजी जमाने में तुम्हारी जैसी सिरफीरी बेटी अब तक उनकी नौकरी ले चुकी होती ।''[61] इससे स्पष्ट

होता है कि रावसाहब विनोदी वृत्ति के भी हैं अत: उपर्युक्त उदाहरण विनोदी वृत्ति के परिचायक है ।

रावसाहब एक साधारण वेशभूषा प्रिय व्यक्ति हैं । अत: बड़े बड़े राजनातिक नेताओं से मिलने की रूचि उन्हें अधिक है ।

समग्ररूप से हम कह सकते हैं कि रावसाहब एक फुर्तीसे विश्व के विभिन्न घात-प्रघातों से परिचयप्राप्त विनोदी वृत्ति के, असाधारण वेशभूषा प्रिय, जबरदस्त सूझ-बुझ तथा खुला व्यवहार और प्रखर व्यवहार बुदि्ध के होकर भी कुछ आदर्शों के प्रति कड़ी निष्ठा रखनेवाले एक अनोखी पात्र के रूप में उपन्यास में चित्रित हुए हैं ।

समन्वित निष्कर्ष -

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन एवं विवेचन – विश्लेषण के पश्चात हम इस निष्कर्ष तक पहुँचे हैं कि कुँवर साहब 'बिस्रामपुर का संत' उपन्यास का प्रमुख पात्र ही नहीं बल्कि नायक भी हैं । उनके चरित्र में पवित्रता नहीं वरन् उपयोगितावादी दर्शन की प्रधानता है । उनकी वाग्देव अत्यंत ही प्रखर व प्रचंड है । वे छद्‌म आदर्शों के बाह्‌य आडंबरों तथा अभ्यंतर में कुटिलताओं की प्रतिमूर्ति है अत: निसंदेह रूप से आज के नेता वर्ग के वे प्रभावशाली प्रतीक है । कुँवर साहब का व्यक्तित्व विविध गुणों से संपन्न है , वैसे कुँवर जयंतीप्रसाद सिंह प्रस्तुत उपन्यास 'बिस्रामपुर का संत' के केंद्रिय पात्र हैं । कुँवर साहब के चरित्र-चित्रण में शुक्लजी ने बाह्‌य चित्रण याने रंग, रूप, वेशभुषा की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया है बल्कि उसके अंतरंग चित्रण की ओर ही अधिक ध्यान दिया है, अत: उनके चरित्र के गुण-दोषों का चित्रण स्पष्ट रूप से किया है ।

उपन्यास में पात्रों की विविधता और विपुलता है । अनेक स्तर के अनेक प्रवृत्तियों के, अनेक प्रकार की उम्र के पात्र उपन्यास में प्रस्तुत हैं । लेखक ने इन पात्रों के द्वारा नई और पुरानी पीढ़ी के अंतर को समझाया है ।

यह उपन्यास सामाजिक तथा ग्रामीण जीवन की विविध समस्याओं का लेखा जोखा प्रस्तुत करता है । शुक्लजी ने 'बिस्रामपुर' को सामने रखकर वर्तमानकालीन भारत की राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक क्षेत्र में व्याप्त विषमताओं का लेखा-जोखा प्रसतुत किया है । उनका उद्देश्य इन विषमताओं पर व्यंग्य करता है इसलिए शुक्ल जी ने पात्रों के बाह्य रूप पर अधिक जोर न देकर उनके अंतरंग में गुण-दोषों का सफल चित्रण किया है । चरित्र के विशेषताओं के अंतर्गत उनके व्यक्तित्व और बौद्धिक गुणों को स्पष्ट किया है ।

प्रस्तुत उपन्यास में सुंदरी के चरित्र में भी लेखक को सफलता मिली है । सुंदरी का पात्र विकसित होता हुआ नहीं दिखायी देता फिर भी उपन्यास में सुंदरी का चरित्र–चित्रण महत्वपूर्ण है । लेखक ने सुंदरी को भारतीय नारी के रूप में प्रस्थापित किया है । वह सुसंस्कृत, विनयशील, विचारशील तथा प्रतिभासंपन्न भी है । सुंदरी स्वयं को दु:खों में डुबोकर दूसरों को हँसते हुए देखने में ही ज्यादा खुशी मानती है । सुंदरी भूदान-आंदोलन के प्रति तथा समाज कार्य के प्रति आसक्त होकर भी वह अपनी भावना कभी व्यक्त नहीं करती । मीरा जैसी तन्मयता उसके प्रेम में दिखायी देती है, इसी कारण हर पाठक की सहानुभूति सुंदरी के प्रति परिलक्षित होती है । अत: स्पष्ट है कि शुक्ल जी को सुंदरी के विश्लेषण में काफी सफलता मिली है ।

विवेक विचारशील, बुद्धिवान और शिष्टाचारी के रूप में प्रस्तुत है । नारी के प्रति - भाव रखनेवाला विवेक एक वास्तववादी पात्र है ।

भ्रष्ट, लाचार, सुविधाभोगी, स्वार्थी, पैसा प्राप्ति के लिए किसानों का शोषण करनेवाले पात्र दुबे महाराज हैं । दुबे महाराज एक जमींदार हैं, अत: वह किसानों पर अन्याय

अत्याचार करने में भी संकोच नहीं करता । इस प्रकार दुबे महाराज का चरित्र खलनायकी प्रवृत्ति से परिपूर्ण शोषक वर्ग का चरित्र है ।

प्रस्तुत उपन्यास में सुशीला का चरित्र भी गौण पात्र के रूप में प्रस्तुत है । कुल मिलाकर सुशीला का चरित्र स्वाभिमानी, स्पष्टवादी, स्वतंत्र विचारोंवाली तथा भ्रष्टाचार का विरोध करनेवाली तथा प्रसंग आने पर विद्रोह भी करनेवाली भारतीय नारी का चरित्र है ।

अन्य गौण पात्रों में निर्मल भाई, नौकर के रूप में धीरजसिंह इनका चित्रण भी हुआ है । जयश्री का चित्रण भी लेखक ने सफलता से उजागर किया है । जिसके चरित्र में कामुकता, का वह शिकार बन गयी है ।

रेड्डी तथा रावसाहब का चरित्र भी भ्रष्टाचारी निष्क्रिय अधिकारी का प्रतिनिधित्व करता है । अपना कर्तव्य छोड़कर विलासी जीवन में रत, सुविधा भोगी अधिकारीयोंका ये दोनों प्रतिनिधित्व करते हैं । अन्य पात्रों में मंत्रीजी जो बिस्रामपुर में कुँवर साहब की हर काम में मदद करता है तथा रामलोटन जो शोषित या किसान वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है इनका चित्रण भी लेखक ने सूक्ष्मता से किया हे और उनके चरित्र को उजागर किया है । अत: अप्रत्यक्ष पात्र में जयश्री के पति एक बुद्धिवान, नौकरीपेशा युवक के रूप में चित्रित हुए हैं । अत: गौण पात्र भी मुख्य पात्रों के चारित्रिक विकास में सहायक रहें हैं । मुख्य पात्रों का चरित्र विकास परिवेश एवं परिस्थिति सापेक्षता में होता है ।

'बिस्रामपुर का संत' में शुक्लजी ने पात्रों का चरित्र चित्रण करते समय वर्णनात्मक शैली में पात्रों के व्यक्तित्व और उनके कार्यो को स्पष्ट किया है ।

इन पात्रों के माध्यम से उपन्यासकारने परिवेश की स्थिति और गति को भी स्पष्ट किया है । कुँवर जयंतीप्रसाद के माध्यम से राजनीतिक नेताओं के चरित्र की पोल खोलने

का प्रयत्न किया है । ये सभी पात्र अपनी अपनी अलग अलग कहानियाँ लेकर मुख्य कहानी के साथ जुडे हुए हैं । ये सारे पात्र परिवेश की उपज लगते हैं । वे खुद अपनी लडाई लडते हैं ।

इस उपन्यास के स्त्री पात्र परिस्थितिकी उपज होकर भी परिवेश से संघर्ष करती करती संतुलन बनाए रखते हैं । नारी पात्र समझौताशील, सोच विचार करनेवाले और परिस्थिति पर गंभीरता से चिंतन करनेवाले लगते है । उपन्यास के गौण पात्र कथावस्तुको गतिशील बनाने के लिए योगदान निभाते हैं । पात्र और चरित्र चित्रण की दृष्टि से 'बिस्रामपुर का संत' उपन्यास सफल है । 'संत' शब्द में व्यंग्य का निर्वाह करके कुँवर जयंतीप्रसाद सिंह के चरित्र की पोल खोलने का प्रयत्न किया है ।

संदर्भ-सूची

अ.नं.	लेखक का नाम	पुस्तक का नाम	पृष्ठ क्रमांक
1.	प्रतापनारायण टंडन	उपन्यास कला	पृ. 163
2.	श्रीलाल शुक्ल	'बिस्रामपुर का संत'	पृ. 46
3.	वही,	वही,	पृ. 64
4.	वही,	वही,	पृ. 186
5.	वही,	वही,	पृ. 134
6.	वही,	वही,	पृ. 192
7.	वही,	वही,	पृ. 54
8.	वही,	वही,	पृ. 61
9.	वही,	वही,	पृ. 192
10.	वही,	वही,	पृ. 80
11.	वही,	वही,	पृ. 178
12.	वही,	वही,	पृ. 167
13.	वही,	वही,	पृ. 168
14.	वही,	वही,	पृ. 167
15.	वही,	वही,	पृ. 185
16.	वही,	वही,	पृ. 133
17.	वही,	वही,	पृ. 167
18.	वही,	वही,	पृ. 167
19.	वही,	वही,	पृ. 170
20.	वही,	वही,	पृ. 172

अ.नं.	लेखक का नाम	पुस्तक का नाम	पृष्ठ क्रमांक
21.	वही,	वही,	पृ. 176
22.	वही,	वही,	पृ. 181
23.	वही,	वही,	पृ. 200
24.	वही,	वही,	पृ. 202
25.	वही,	वही,	पृ. 204
26.	वही,	वही,	पृ. 204
27.	वही,	वही,	पृ. 184
28.	वही,	वही,	पृ. 170
29.	वही,	वही,	पृ. 161
30.	वही,	वही,	पृ. 10
31.	वही,	वही,	पृ. 161
32.	वही,	वही,	पृ. 161
33.	वही,	वही,	पृ. 161
34.	वही,	वही,	पृ. 160-161
35.	वही,	वही,	पृ. 164
36.	वही,	वही,	पृ. 166
37.	वही,	वही,	पृ. 159
38.	वही,	वही,	पृ. 159
39.	वही,	वही,	पृ. 171
40.	वही,	वही,	पृ. 138
41.	वही,	वही,	पृ. 138

अ.नं.	लेखक का नाम	पुस्तक का नाम	पृष्ठ क्रमांक
42.	वही,	वही,	पृ. 197
43.	श्रीलाल शुक्ल	बिस्रामपुर का संत	पृ. 196
44.	वही,	वही,	पृ. 124
45.	वही,	वही,	पृ. 123
46.	वही,	वही,	पृ. 54
47.	वही,	वही,	पृ. 58
48.	वही,	वही,	पृ. 52
49.	वही,	वही,	पृ. 62
50.	वही,	वही,	पृ. 51
51.	वही,	वही,	पृ. 62
52.	वही,	वही,	पृ. 113
53.	वही,	वही,	पृ. 114
54.	वही,	वही,	पृ. 150
55.	वही,	वही,	पृ. 150
56.	वही,	वही,	पृ. 197
57.	वही,	वही,	पृ. 71
58.	वही,	वही,	पृ. 71
59.	वही,	वही,	पृ. 97
60.	वही,	वही,	पृ. 97
61.	वही,	वही,	पृ. 97